www.rashtratak.com | twitter.com/rashtratak | facebook.com/rashtratak | @rashtratak

मूल्य ₹ 89

राष्ट्रीय हिंदी पत्रिका

राष्ट्र समाज

नई दिल्ली से प्रकाशित

RNI No.: DELHIN/2014/56304

वर्ष-13 ▮ अंक-01 ▮ अप्रैल 2026 ▮ पृष्ठ संख्या 52

आपकी आवाज़...

योगी के गढ़ में दरकेगा ब्राह्मण वोट बैंक! 10

नीतिगत लापरवाही से गहराता एलपीजी संकट 18

सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति का ही परिणाम है कि आज प्रदेश का चहुंमुखी विकास हो रहा है, जिसमें 'विरासत' और 'विकास' दोनों का अद्भुत सामंजस्य है।

योगी आदित्यनाथ के 9 वर्ष

उल्टा प्रदेश से उत्सव प्रदेश तक

SAKARNI PLASTER (INDIA) PRIVATE LIMITED
D Mall 405, Netaji Subhash Place, Pitampura, New Delhi-110034
customercare@sakarni.com | +91-9810177365 | www.sakarni.com

संपादकीय

प्रमोद तिवारी संपादक

क्या यह आपूर्ति की बाधा है या फिर संकट की आड़ में छिपी हुई कालाबाजारी का पुराना खेल? जब आपूर्ति श्रृंखला में अनिश्चितता आती है, तो बिचौलियों और मुनाफाखोरों की चांदी हो जाती है, जो कृत्रिम कमी पैदा करके आम आदमी की लाचारी का फायदा उठाते हैं।

दुनिया के मानचित्र पर जब भी किसी देश की सीमाएं सुलगती हैं, तो उसकी लपटें हजारों मील दूर बैठे एक भारतीय परिवार की रसोई तक पहुँचने में देर नहीं लगातीं। आज की वैश्वीकृत दुनिया में सरहदों पर गिरा हर बम हमारी जेब में एक अदृश्य छेद कर देता है। एक अजीब सा विरोधाभास देखने को मिल रहा है। एक तरफ सरकारी प्रेस रिलीज और दावे सब कुछ सामान्य होने की बात कह रहे हैं, तो दूसरी तरफ हकीकत यह है कि मोहल्लों की दुकानों और गैस एजेंसियों के बाहर स्टॉक खत्म होने की तख्तियां लटक रही हैं। सत्ता के गलियारों से जब यह बयान आता है कि देश में गैस की कोई कमी नहीं है, तो यह सुनकर उस कतार में खड़े आम आदमी को सुकून कम और खीझ ज्यादा होती है, जो पिछले कई दिनों से अपने गैस कनेक्शन के रिफिल होने का इंतजार कर रहा है। सवाल यह है कि अगर गैस की कमी नहीं है, तो फिर वह आम आदमी के चूल्हे तक पहुँच क्यों नहीं रही? राजनीति और कूटनीति की वह बारीक परत है जिसे समझना जरूरी है। सरकार का यह तर्क तकनीकी रूप से सही हो सकता है कि हमारे पास पर्याप्त भंडारण है, लेकिन उपलब्धता और पहुँच के बीच की कड़ी बुरी तरह चरमरा गई है। वैश्विक स्तर पर बढ़ते तनाव ने रसद और परिवहन की कमर तोड़ दी है। जो जहाज पंद्रह दिन में भारत पहुँचते थे, वे अब रास्ता बदलकर आ रहे हैं, जिससे न केवल समय बढ़ गया है बल्कि माल ढुलाई का खर्च भी चालीस प्रतिशत तक ऊपर चला गया है। लेकिन क्या सारा दोष केवल भूगोल और युद्ध पर मढ़ा जा सकता है? हकीकत यह है कि जब अंतरराष्ट्रीय बाजार में कीमतें अस्थिर होती हैं, तो सरकारी तेल कंपनियां अपने घाटे को कम करने के लिए आपूर्ति की गति धीमी कर देती हैं। यह एक अलिखित राशनिंग है, जहाँ ऊपर से तो कहा जाता है कि सप्लाई जारी है, लेकिन नीचे वितरकों तक कोटा कम पहुँच रहा है। सरकारी दावों और जमीनी किल्लत के बीच का यही वह धुंधला क्षेत्र है जहाँ आम आदमी पिस रहा है। यहाँ सबसे बड़ा सवाल सिस्टम की पारदर्शिता पर खड़ा होता है। यदि सरकार के पास पर्याप्त स्टॉक मौजूद है, तो वितरण के स्तर पर यह अचानक गायब कैसे हो जाता है? क्या यह आपूर्ति की बाधा है या फिर संकट की आड़ में छिपी हुई कालाबाजारी का पुराना खेल? जब आपूर्ति श्रृंखला में अनिश्चितता आती है, तो बिचौलियों और मुनाफाखोरों की चांदी हो जाती है, जो कृत्रिम कमी पैदा करके आम आदमी की लाचारी का फायदा उठाते हैं। सरकार को केवल पोर्टल्स पर डेटा अपडेट करने के बजाय उन जमीनी लीकेज को बंद करना होगा, जहाँ से जनता का राशन और हक रिसकर अवैध गोदामों तक पहुँच जाता है। किसी भी आपदा की पहली मार गरीब और मध्यम वर्ग पर ही क्यों पड़ती है, जबकि बड़े कारोबारी इसी संकट को अवसर में तब्दील कर लेते हैं? सरकारी तंत्र की सुस्ती और निगरानी की कमी ने ही आज एक साधारण गैस सिलेंडर को दुर्लभ वस्तु बना दिया है।

राष्ट्र समाज

RNI No.: DELHIN/2014/56304 ₹ 89

वर्ष-13, अंक-01, अप्रैल 2026

पृष्ठ संख्या-52

प्रेरणा स्रोत
स्व.पुरुषोत्तम तिवारी, स्व.एन.के. लोहिया

मुख्य संरक्षक
विनीत कुमार गुप्ता

संरक्षक
बालमुकुन्द ओझा, त्रिवेणी नाथ तिवारी, हरिशंकर दुबे, संजीव गोयल

संपादक
प्रमोद तिवारी

सह संपादक
सुशील ओझा,आनंद दीप श्रीवास्तव, आचार्य श्रीकांत तिवारी

सलाहकार समिति
अशोक गुप्ता (सकरनी) सभाजीत पांडेय, एम. के त्रिपाठी, विपिन गोयल, संजीव गोयल, ऋषि मित्तल

कानूनी सलाहकार
अधिवक्ता बीपी पाण्डेय, गौरव भारद्वाज

ब्यूरो चीफ
किरन ओझा, पुनीत मिश्र, अखिलेश शर्मा, बसंत भट्ट, हरीश तिवारी, अशोक शर्मा

प्रसार
पुनीत मिश्रा-9911882767

विज्ञापन
आशुतोष तिवारी- 83682 72439

डिजाइन व प्रोडक्शन
एनएम मीडिया सॉल्यूशंस, दिल्ली

संपादकीय कार्यालयः मकान नं. 2, हपली मंजिल, पश्चिम एन्क्लेव, रोहतक रोड, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-110087
दुरभाषः 011-40105158, 9953772767
वेब : www.railhumrahi.com
ई-मेल : rastrasamaj@gmail.com

स्वत्वाधिकारी अपराइट मीडिया प्राइवेट लिमिटेड के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक प्रमोद तिवारी द्वारा एस-561, ग्रेटर कैलाश, पार्ट-2, नई दिल्ली-84 से प्रकाशित तथा मित्तल इण्टरप्राइजेज 2016 गोकुल शाह स्ट्रीट सीता राम बाजार दिल्ली-06 से मुद्रित।
*संपादकः प्रमोद तिवारी *

लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित

नोटः पत्रिका में प्रकाशित सभी लेखों आदि से संपादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है, तथा किसी भी कानूनी वाद-विवाद का निपटारा दिल्ली न्यायालय में ही किया जायेगा। राष्ट्र समाज पत्रिका में प्रकाशित सभी पद अवैतनिक हैं। पत्रिका के लिए भेजी गयी सामग्री के प्रकाशन पर पूर्व अनुबंध के बिना कोई भी पारिश्रमिक देने की व्यवस्था नहीं है।

6

योगी आदित्यनाथ के 9 वर्ष 'उल्टा प्रदेश' ...
उत्तर प्रदेश की राजनीति के इतिहास में वर्ष 2017 एक युगांतरकारी मोड़ साबित हुआ।...

38

'शादीशुदा पुरुष का लिव-इन में रहना कोई अपराध नहीं
इलाहाबाद हाईकोर्ट ने लिव इन रिलेशनशिप को लेकर महत्वपूर्ण फैसला सुनाया है। हाईकोर्ट ने कहा है कि एक शादीशुदा पुरुष का लिव-इन रिलेशनशिप में रहना कोई अपराध नहीं है।

18

धर्म बदलते ही खत्म होगा एससी दर्जा
भारत के सुप्रीम कोर्ट ने मंगलवार को एक ऐसा फैसला सुनाया जिसने सामाजिक न्याय की पूरी बहस को फिर से गरमा दिया है। अदालत ने साफ कहा कि हिंदू, सिख या बौद्ध धर्म के अलावा किसी और धर्म में जाने वाला व्यक्ति अनुसूचित जाति का दर्जा तुरंत खो देता है।

अंदर

18

नीतिगत लापरवाही से गहराता एलपीजी संकट

भारत आज एक ऐसे ऊर्जा संकट के मुहाने पर खड़ा है, जिसकी आहट लंबे समय से सुनाई दे रही थी, लेकिन नीतिगत सुस्ती और दूरदृष्टि के अभाव ने इसे एक वास्तविक खतरे में बदल दिया है।

26

नीतीश कुमार की बिहारी चाल के सियासी निहितार्थ

बिहार के मुख्यमंत्री और जनता दल यूनाइटेड सुप्रीमो नीतीश कुमार राजनीति के मंजे हुए खिलाड़ी हैं। सियासत के चाणक्य श्री कुमार ने भाजपा के दबाव में नहीं, बल्कि अपनी केंद्रीय राजनीतिक संभावनाओं को उभारने के लिए दिल्ली कूच करने का अप्रत्याशित फैसला लिया है।

50

15 साल की जाह्नवी के साथ हुई थी दिल दहला देने वाली घटना

बॉलीवुड एक्ट्रेस जाह्नवी कपूर आए दिनों अपने लुक्स और अपने रिलेशनशिप को लेकर चचाओं में बनी रहती हैं। जाह्नवी कपूर जब भी किसी शो में या इवेंट में जाती हैं वह अपने अनुभव जरूर साझा करती हैं।

योगी आदित्यनाथ के 9 वर्ष
'उल्टा प्रदेश' से 'उत्सव प्रदेश' तक

@ प्रमोद तिवारी

उत्तर प्रदेश की राजनीति के इतिहास में वर्ष 2017 एक युगांतरकारी मोड़ साबित हुआ। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी गठबंधन की सरकार ने सत्ता के नौ गौरवशाली वर्ष सफलतापूर्वक पूर्ण कर लिए हैं। इन नौ वर्षों का कालखंड केवल सत्ता संचालन का समय नहीं रहा, बल्कि यह राज्य की कानून-व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और ढांचागत विकास के नए प्रतिमान गढ़ने का साक्षी बना है। अपनी सरकार की इन अभूतपूर्व उपलब्धियों को जन-जन तक पहुँचाने और पारदर्शिता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से शासन द्वारा 'नवनिर्माण के नौ वर्ष' नामक एक विस्तृत पुस्तक का प्रकाशन भी किया गया है, जो प्रदेश के कायाकल्प की सजीव गाथा कहती है।

'नया उत्तर प्रदेश'

यदि हम वर्ष 2017 से पूर्व के उत्तर प्रदेश का विश्लेषण करें, तो राज्य प्रशासनिक पंगुता और निरंतर होने वाली सांप्रदायिक हिंसा के जाल में फंसा हुआ था। छोटी-छोटी तुच्छ बातों पर फसाद भड़क उठना और राजनीतिक संरक्षण प्राप्त माफियाओं का समानांतर सत्ता चलाना एक कड़वी सच्चाई थी। लचर कानून-व्यवस्था के कारण बड़े निवेशक यहाँ आने के नाम से ही कतराते थे, और लोग उपहास में प्रदेश को

'उल्टा प्रदेश' कहकर संबोधित करने लगे थे। योगी आदित्यनाथ के कमान संभालते ही इस नकारात्मक छवि पर कड़ा प्रहार हुआ। मुख्यमंत्री का स्पष्ट मानना है कि आज प्रदेश की 'पहचान का संकट' पूरी तरह समाप्त हो चुका है। अब 'सुरक्षा, निवेश और विकास' उत्तर प्रदेश की वैश्विक पहचान बन चुके हैं। आज उत्तर प्रदेश की सड़कों पर तनाव, कर्फ्यू या दंगे नहीं, बल्कि उत्सवों की गूँज सुनाई देती है। ऐसे दुर्दांत माफियाओं के साम्राज्य का अंत हुआ है, जिनके रसूख के सामने पूर्ववर्ती सपा, बसपा और कांग्रेस की सरकारें अक्सर नतमस्तक नजर आती थीं।

आधुनिक प्रगति का समन्वय

सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति का ही परिणाम है कि आज प्रदेश का चहुंमुखी विकास हो रहा है, जिसमें 'विरासत' और 'विकास' दोनों का अद्भुत सामंजस्य है। लंबे और कठिन कानूनी संघर्ष के पश्चात अयोध्या में प्रभु श्रीराम के दिव्य और भव्य मंदिर का निर्माण संभव हो पाया है, जो आज करोड़ों श्रद्धालुओं की आस्था का वैश्विक केंद्र बन गया है। अयोध्या का यह कायाकल्प केवल धार्मिक दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि आधुनिक नागरिक सुविधाओं के नजरिए से भी विश्वस्तरीय है। अयोध्या को आज अपना अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा, आधुनिक रेलवे स्टेशन और अत्याधुनिक मेडिकल कॉलेज मिल चुका है। संपूर्ण अयोध्या नगरी का विकास उसकी पुरातन संस्कृति को अक्षुण्ण रखते हुए नवीन तकनीकी और वैश्विक सुविधाओं के साथ किया जा रहा है। काशी विश्वनाथ कॉरिडोर से लेकर अयोध्या के नव-निर्माण तक, यह नौ वर्ष उत्तर प्रदेश के 'सांस्कृतिक पुनर्जागरण' के स्वर्णिम काल के रूप में दर्ज हो चुके हैं। सुशासन और सुदृढ़

कानून-व्यवस्था के आधार पर खड़ा यह 'नया उत्तर प्रदेश' आज भारत की अर्थव्यवस्था का पावरहाउस बनने की ओर अग्रसर है।

इसी प्रकार काशी का विश्वनाथ धाम कॉरिडोर निर्माण से काशी का स्वरूप भी निखरकर सामने आ रहा है। प्रयागराज में महाकुंभ में 66 करोड़ श्रद्धालुओं ने पुण्य की डुबकी लगाकर इतिहास रच दिया। इसी प्रकार मां विन्ध्यवासिनी कॉरिडोर के निर्माण से मां विन्ध्यवासिनी जाने वाले सभी श्रद्धालुओं को एक विशेष अनुभूति व आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति हो रही है। योगी सरकार आने के बाद प्रदेश में धार्मिक पर्यटन के साथ साथ अन्य पर्यटन गतिविधियों का विकास होने के कारण इस क्षेत्र में युवाओ के लिए रोजगार के नए अवसर खुल रहे हैं। प्रदेश की आस्था, संस्कृति व परंपराओं को सम्मान देते हुए उन्हें नई पहचान दिलाने का प्रयास लगातार जारी है। प्रदेश में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए कई अहम प्रयास किए जा रहे हैं, जिसके अंतर्गत 96 लाख एमएमएमई इकाइयां संचालित की जा रही हैं। लखनऊ में राष्ट्र प्रेरणा स्थल का निर्माण किया गया है।

एक जिला-एक उत्पाद योजना, एक जिला एक व्यंजन योजना के साथ ही प्रदेश के हर जिले में कम से कम एक पर्यटन स्थल का विकास किया जा रहा है। विगत नौ वर्षों के कार्यकाल में सरकार ने सुरक्षा, इंफ्रास्ट्रक्चर, निवेश, रोजगार, किसानों के कल्याण, महिलाओं के सशक्तीकरण और गरीबों के उत्थान के लिए व्यापक स्तर पर कार्य किए हैं। अनेकानेक कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से दलितों, वंचितों और समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति तक सरकारी लाभ पहुंच रहा है। शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और सेवा क्षेत्रों में सुधार करते हुए सुशासन की दिशा में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

प्रदेश में हिंदू समाज के मतांतरण को रोकने के लिए एक कड़ा कानून लाया गया और साथ ही लव जिहाद जैसी घटनाओं को रोकने के लिए भी प्रदेश सरकार कनून लेकर आई। बेटियों की सुरक्षा के लिए एंटी रोमियो स्क्वायड का गठन किया गया। महिला सुरक्षा एवं सशक्तीकरण को बढ़ावा देने के लिए कई अहम कदम सरकार द्वारा समय-समय पर उठाए जाते रहे हैं। नारी सुरक्षा, सम्मान और स्वावलंबन को समर्पित मिशन शक्ति अभियान प्रदेशभर में चलाया जा रहा है। मुख्यमंत्री सुमंगला योजना से बेटियां सशक्त हो रही हैं। प्रदेश की पीएसी को जीवन्त करते हुए प्रदेश में पहली बार पीएसी मे महिलाओं के लिए तीन नई बटालियन की शुरूआत की गई। गरीब बेटियों के लिए विवाह के समय दी जाने वाली सरकारी सहायता भी बढ़ा दी गई है। मेधावी बेटियों के लिए स्कूटी योजना आई है।

प्रदेश का विकास परिवर्तनकारी है आज प्रदेश में सात एक्सप्रेस वे संचालित हैं, 15 का विकास कार्य प्रगति पर है। प्रदेश में 16 एयरपोर्ट संचालित हो रहे हैं और 8 निमार्णाधीन हैं। बहु प्रतीक्षित जेवर एयरपोर्ट का उद्घाटन आगामी 28 मार्च, 2026 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी करेंगे। सात प्रमुख शहरों में मेट्रो सेवा चल रही है। नई सड़क परियोजनाएं राज्य के विकास के लिए पहचान बन चुकी हैं। वाराणसी से प्रयागराज और बलिया से अयोध्या तक वाटर-वे की सुविया बढ़ाई जा रही है। उत्तर प्रदेश तीव्र गति से विकसित प्रदेश बनने की राह पर अग्रसर है। खाद्यान्न, गन्ना, आम एवं दुग्ध उत्पादन सहित अनेक क्षेत्रों में यूपी देश के पहले पायदान

प्रयागराज में महाकुंभ में 66 करोड़ श्रद्धालुओं ने पुण्य की डुबकी लगाकर इतिहास रच दिया। इसी प्रकार मां विन्ध्यवासिनी कॉरिडोर के निर्माण से मां विन्ध्यवासिनी जाने वाले सभी श्रद्धालुओं को एक विशेष अनुभूति व आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति हो रही है। योगी सरकार आने के बाद प्रदेश में धार्मिक पर्यटन के साथ साथ अन्य पर्यटन गतिविधियों का विकास होने के कारण इस क्षेत्र में युवाओ के लिए रोजगार के नए अवसर खुल रहे हैं।

पर पहुंच चुका है। प्रदेश के किसानों को पूरी ईमानदारी से, समय पर भुगतान तो हो रहा है। किसानों की आय दोगुनी करने के लिए व्यापक योजनाएं चलाई जा रही हैं। किसानों तक केंद्र व राज्य सरकार की समस्त योजनाओं का लाभ पहुँचाया जा रहा है।

प्रदेश में भरपूर निवेश लाने के लिए स्वयं मुख्यमंत्री योगी ने जापान और सिंगापुर का सफल दौरा किया जबकि उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य ने जर्मनी का सफल दौरा किया। प्रदेश के नौ लाख से अधिक युवाओं को सरकारी नौकरियां मिल चुकी हैं। युवाओं के लिए सरकार ने कई कदम उठाए तथा ऐतिहासिक घोषणाएं की हैं जिनके अंतर्गत अब प्रदेश सरकार युवाओं को एआई जैसे नये क्षेत्रों में भी प्रशिक्षित करने जा रही है। सरकार ने युवाओं के लिए अभ्युदय कोचिंग चलाई जिससे हजारों छात्र सफल होकर नौकरी प्राप्त कर चुके हैं। मुख्यमंत्री योगी के नेतृत्व वाली सरकार में हिंदुओं के आस्था केंद्रों का सम्मान हुआ है। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ हर क्षण जनसमस्याओं के समाधान के प्रति कार्यरत रहते हैं। उन्होंने जनता दरबार के साथ साथ, जनता से सीधे जुड़े रहने के लिए योगी की पाती लिखनी आरम्भ की है। मुख्यंमत्री ने "नवनिर्माण के नौ वर्ष" पुस्तक विमोचन के अवसर पर सनतान का संदेश दिया और भविष्य की दृष्टि भी स्पष्ट की।

योगी के गढ़ में दरकेगा ब्राह्मण वोट बैंक!

@ प्रमोद तिवारी

उत्तर प्रदेश का सियासी समर जैसे-जैसे नजदीक आ रहा है, दांव-पेच और अधिक आक्रामक होते जा रहे हैं। सत्ता के गलियारों में अब हर हलचल और प्रशासनिक निर्णय को चुनावी चश्मे से देखा जा रहा है ताकि सामाजिक समीकरणों की नब्ज टटोली जा सके। एक ओर यादव और मुस्लिम मतदाताओं का झुकाव स्पष्ट तौर पर समाजवादी पार्टी की ओर दिख रहा है, हालांकि ओवैसी की सक्रियता सपा के लिए चिंता का सबब बन सकती है। वहीं दूसरी ओर, भाजपा का सबसे विश्वसनीय आधार माना जाने वाला ब्राह्मण समुदाय फिलहाल योगी सरकार की कार्यशैली से असहज नजर आ रहा है। हाल ही में पुलिस भर्ती परीक्षा के एक विवादास्पद प्रश्न ने इस सुलगते असंतोष में चिंगारी का काम किया है।

दरोगा भर्ती की परीक्षा में पूछा गया एक विकल्प अब जातिगत गौरव और अस्मिता की लड़ाई बन चुका है। प्रश्न के माध्यम से 'अवसरवादिता' को जिस तरह एक विशिष्ट वर्ण से जोड़कर पेश किया गया, उसने बौद्धिक वर्ग को गहरे जख्म दिए हैं। ज्ञान की कसौटी के नाम पर किया गया यह प्रयोग अब सरकार के गले की फांस बन गया है। हालांकि, डिप्टी सीएम ब्रजेश पाठक ने त्वरित मोर्चा संभालते हुए इसे सामाजिक अपमान करार दिया और भविष्य में ऐसी चूक न होने का भरोसा दिलाया। सरकार ने हड़बड़ी में जांच कमेटी बिठाकर अपनी मंशा साफ करने की कोशिश की है।

स्वयं मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने भी कड़ा रुख अपनाते हुए भर्ती संस्थानों को स्पष्ट हिदायत दी है कि किसी भी समुदाय की मयार्दा से खिलवाड़ बर्दाश्त नहीं होगा। बार-बार त्रुटि करने वाले बोर्डों पर ब्लैकलिस्ट होने का खतरा मंडरा रहा है। बावजूद इसके, राजनैतिक विश्लेषकों का मानना है कि क्या महज कागजी कार्रवाई और चेतावनियों से यह गहराता आक्रोश शांत हो पाएगा? ब्राह्मणों की यह तल्खी किसी एक संयोग का परिणाम नहीं, बल्कि पिछले काफी समय से संचित हो रहे उन अनुभवों की परिणति है, जो अब चुनावी पाला बदलने की सुगबुगाहट पैदा कर रहे हैं।

दिसंबर 2025 में विधानसभा सत्र के दौरान जब भाजपा के कुछ ब्राह्मण विधायकों ने लखनऊ में बैठक की तो प्रदेश अध्यक्ष पंकज चौधरी ने तुरंत सख्त चेतावनी दे दी। कहा गया कि जाति आधारित बैठक राजनीति पार्टी को मंजूर नहीं। लेकिन ठीक उसी साल अगस्त में ठाकुर विधायकों की बैठक हुई जिसमें चालीस से ज्यादा नेता शामिल थे। वह बैठक पांच सितारा होटल में हुई और उसे कुटुंब परिवार का नाम दिया गया। लोध और कुर्मी विधायकों की बैठक भी हुई लेकिन उन पर कोई नोटिस नहीं दिया गया। कोई चेतावनी नहीं मिली। सपा और कांग्रेस ने इस दोहरे मानदंड पर तीखे सवाल खड़े किए।

उन्होंने कहा कि भाजपा में ब्राह्मण विधायक एक जगह जुट भी नहीं सकते और न ही अपनी बात रख सकते हैं। यह ब्राह्मण पॉलिटिक्स पर सवाल था जो आज भी गूंज रहा है। फिर आया माघ मेला का विवाद। प्रयागराज में शंकराचार्य स्वामी अविमुक्तेश्वरानंद पालकी पर सवार होकर स्नान के लिए जा रहे थे। पुलिस ने कानून व्यवस्था का हवाला देकर रोका। धक्का-मुक्की हुई। शंकराचार्य के समर्थक बटुक ब्राह्मणों की चोटियां खींचने के आरोप पुलिस पर लगे। मामला इतना बढ़ा कि शंकराचार्य धरने पर बैठ गए और बिना स्नान किए लौट गए। सपा और कांग्रेस ने इसे राजनीतिक मुद्दा बना दिया। डिप्टी सीएम केशव प्रसाद मौर्य और ब्रजेश पाठक को ब्राह्मणों की नाराजगी दूर करने के लिए मैदान में उतरना पड़ा। बृजेश पाठक ने अपने सरकारी आवास पर सौ बटुकों को सम्मानित किया लेकिन क्या यह कदम पर्याप्त था। समाज अभी भी कह रहा है कि प्रशासन ने शंकराचार्य के साथ जो रवैया अपनाया वह अपमानजनक था।

फिर आई फिल्म घूसखोर पंडित। नेटफ्लिक्स पर मनोज बाजपेयी अभिनीत इस फिल्म का टीजर फरवरी 2026 में जारी हुआ। पुलिस अधिकारी को पंडित कहकर संबोधित किया गया। ब्राह्मण संगठनों ने देशभर में विरोध प्रदर्शन किए। यूपी में पोस्टर जलाए गए। सड़कों पर प्रदर्शन हुए। मामले ने सुप्रीम कोर्ट तक पहुंचा। अदालत ने फिल्म रिलीज से पहले नाम बदलने का आदेश दिया और सीबीएफसी को नोटिस जारी किया। निमार्ता नीरज पांडे को

शीर्षक बदलना पड़ा। ब्राह्मण समाज ने इसे साजिश बताया कि जानबूझकर एक समुदाय को भ्रष्ट और घूसखोर करार दिया जा रहा है। फिल्म का नया नाम अभी तक तय नहीं हुआ लेकिन समाज के दिल में जो चोट लगी वह अभी भी ताजी है।यूजीसी के नए नियमों ने भी सवर्ण समाज खासकर ब्राह्मणों को नाराज किया। दलित और ओबीसी छात्रों के साथ भेदभाव रोकने के नाम पर बनाए गए नियमों को ब्राह्मणों ने अपने खिलाफ देखा। बरेली के सिटी मजिस्ट्रेट अलंकार अग्निहोत्री ने इस्तीफा दे दिया। उन्होंने माघ मेले में शंकराचार्य शिष्यों के साथ दुर्व्यवहार और यूजीसी नियमों को वजह बताया। सुप्रीम कोर्ट को हस्तक्षेप करना पड़ा। मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत और जस्टिस जॉयमाल्य बागची की बेंच ने यूजीसी एक्ट 2026 पर रोक लगा दी। अदालत ने कहा कि नियम सामान्य वर्ग को टारगेट कर रहे हैं और सामाजिक बंटवारा बढ़ा सकते हैं। केंद्र को नए नियम बनाने के लिए कहा गया। लेकिन इस दौरान ब्राह्मण सड़कों पर उतरे सोशल मीडिया पर विरोध हुआ।

ये सारी घटनाएं एक के बाद एक आईं और हर बार सरकार को सफाई देनी पड़ी। हर बार डैमेज कंट्रोल करना पड़ा। लेकिन ब्राह्मण समाज पूछ रहा है कि क्यों बार-बार उसकी भावनाओं की अनदेखी हो रही है। उत्तर प्रदेश में ब्राह्मण वोटरों की संख्या दस प्रतिशत से ज्यादा है। 2017 के बाद से भाजपा को इनका 85 से 90 प्रतिशत वोट मिलता रहा है। यह परंपरागत वोट बैंक है जो पार्टी की रीढ़ रहा है। लेकिन 2017 के बाद ब्राह्मणों की शिकायत लगातार बढ़ी है। उन्हें पार्टी और सरकार में उचित सम्मान नहीं मिल रहा। उनकी बात नहीं सुनी जा रही। कुशीनगर के विधायक पीएन पाठक ने ब्राह्मण विधायकों की बैठक में कर्तव्य और अन्याय के खिलाफ खड़े होने की बात कही थी। लेकिन प्रदेश अध्यक्ष की चेतावनी के बाद खामोशी छा गई।

अब सपा इस नाराजगी को अपना हथियार बना रही है। उसके ब्राह्मण नेता लगातार योगी सरकार पर हमलावर हैं। कांग्रेस भी पीछे नहीं। ब्राह्मण समाज के संगठन खुलकर कह रहे हैं कि भाजपा ने उन्हें सिर्फ वोट बैंक समझा है लेकिन सम्मान नहीं दिया। ठाकुर कुर्मी लोध जैसे अन्य समुदायों की बैठकें बिना किसी रोक टोक के हो जाती हैं लेकिन ब्राह्मणों की बैठक पर तुरंत नोटिस। परीक्षा का सवाल पंडित को अवसरवादी बताता है। फिल्म का नाम घूसखोर पंडित रखा जाता है। माघ मेले में बटुकों के साथ बदसलूकी। यूजीसी नियम सामान्य वर्ग को निशाना बनाते हैं। ये सारे मुद्दे एक साथ जुड़कर ब्राह्मणों को यह अहसास दिला रहे हैं कि उनकी उपेक्षा हो रही है।2027 के चुनाव में अगर ब्राह्मण वोट में सिर्फ पांच प्रतिशत भी कमी आई तो भाजपा के कई सीटों पर असर पड़ सकता है। खासकर उन क्षेत्रों में जहां ब्राह्मण निर्णायक भूमिका में हैं। पार्टी के अंदर भी ब्राह्मण नेता चुपचाप असंतोष जता रहे हैं। लेकिन ऊपर से कोई भी खुलकर नहीं बोल रहा। सरकार को अब सिर्फ निर्देश जारी करने से आगे बढ़कर ठोस कदम उठाने होंगे। ब्राह्मण संगठनों से संवाद बढ़ाना होगा। परीक्षा बोर्डों में सख्त निगरानी करनी होगी।

फिल्म और मीडिया में जाति आधारित अपमान को रोकने के लिए कानूनी प्रावधान मजबूत करने होंगे। यूजीसी जैसे मुद्दों पर संवेदनशीलता दिखानी होगी। ब्राह्मण समाज सदियों से ज्ञान विज्ञान और संस्कृति का संरक्षक रहा है। अवसरवादी या घूसखोर जैसे शब्दों से उसे जोड़ा जाना न सिर्फ गलत है खतरनाक भी। योगी सरकार ने विकास और कानून व्यवस्था पर जोर दिया है लेकिन अगर सामाजिक संतुलन बिगड़ गया तो पूरा प्रयास प्रभावित हो सकता है। ब्राह्मण नाराजगी अब सिर्फ भावनात्मक मुद्दा नहीं रह गया है। यह सियासी गणित का हिस्सा बन चुका है। अगर सरकार ने समय रहते इसे समझा और ठीक किया तो 2027 में यह खतरा टल सकता है। वरना यह बादल और घने होते जाएंगे और चुनावी मैदान में भारी पड़ सकते हैं। ब्राह्मण समाज की आवाज अब सिर्फ चेतावनी नहीं बल्कि चेतावनी का अलार्म बन चुकी है। सरकार को इसे अनसुना नहीं करना चाहिए।

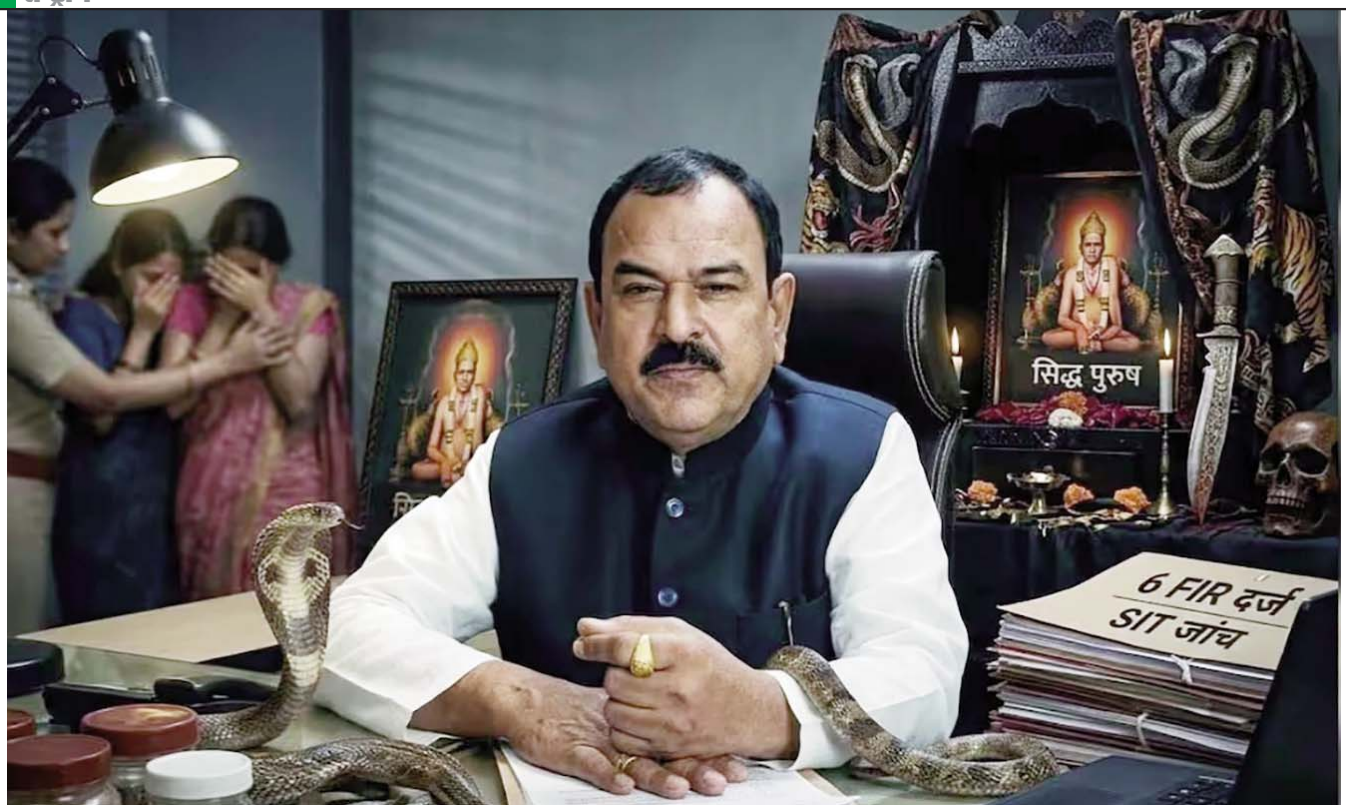

आस्था की आड़ में अय्याशी

@ राष्ट्र समाज

महाराष्ट्र के नासिक से एक ऐसी रूहानी धोखाधड़ी की खबर सामने आई है, जिसने समाज के विश्वास को झकझोर कर रख दिया है। यह मामला महज एक अपराध की कहानी नहीं, बल्कि श्रद्धा के नाम पर किए गए सबसे वीभत्स विश्वासघात का दस्तावेज है। जिस शख्स को दुनिया 'गुरु' मानकर अपनी समस्याओं की पोटली सौंपती थी, वह असल में अपने फार्महाउस और दफ्तर को एक खौफनाक जाल में तब्दील कर चुका था। बेडरूम में छिपे कैमरे, महिलाओं को फांसने के लिए बुने गए झूठे वादे और फिर सम्मोहन की आड़ में उनका दैहिक शोषण- 58 महिलाओं के वीडियो सामने आने के बाद अशोक खरात के इस 'पाप लोक' का सच अब पूरी तरह बेनकाब हो गया है।

रिपोर्ट्स के मुताबिक, आरोपी ने अपनी रसूखदार छवि को ही शिकार का हथियार बनाया। खुद को 'कैप्टन' कहलवाने वाला यह ढोंगी लोगों के मन में आस्था और डर का ऐसा कॉकटेल भरता था कि पीड़ित अपनी सुध-बुध खो बैठते थे। लाचार महिलाओं को यह भरोसा दिलाया जाता था कि उनकी तमाम बाधाएं आध्यात्मिक शक्ति से दूर हो जाएंगी, जबकि हकीकत में उन्हें एक ऐसे दलदल में धकेला जा रहा था जहाँ से वापसी नामुमकिन थी। सम्मोहन, नशीले पदार्थों का खेल और फिर वीडियो के जरिए ब्लैक मेलिंग–इन तीन हथियारों के बल पर खरात ने अपना यह काला साम्राज्य खड़ा किया था। आज यह घटना न केवल पुलिसिया जांच का विषय है, बल्कि उन तमाम 'सफेदपोश' गुरुओं के चेहरे पर तमाचा है जो मजबूरी का फायदा उठाकर इंसानियत को शर्मसार कर रहे हैं।

अशोक खरात नासिक के सिन्नर तालुका के मिरगांव स्थित श्री ईशान्येश्वर मंदिर ट्रस्ट का चेयरमैन भी बताया जाता है। इस पद के चलते उसकी स्थानीय स्तर पर अच्छी पकड़ थी और लोगों के बीच उसकी छवि एक 'आध्यात्मिक मार्गदर्शक' की बन गई थी। यही वजह थी कि आम लोगों से लेकर प्रभावशाली व्यक्तियों तक, कई लोग उससे जुड़ते गए। यह पहला मौका नहीं है जब अशोक खरात विवादों में आया हो। महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के कार्यकर्ता पहले से ही उसके खिलाफ मोर्चा खोल चुके थे। जब मुख्यमंत्री एकनाथ शिंदे उसके यहां पहुंचे थे, तब भी इस मुलाकात को लेकर काफी विवाद हुआ था। अंधविश्वास के खिलाफ काम करने वाले संगठनों ने इस पर सवाल उठाए थे और ऐसे 'बाबाओं' को बढ़ावा देने पर आपत्ति जताई थी।

इस हाई प्रोफाइल बाबा की गिरफ्तारी ने महाराष्ट्र में सियासी हलचल बढ़ा दी है। पुलिस एफआईआर के मुताबिक, आरोपी अशोक खरात जो खुद को 'कैप्टन' कहता था, मर्चेंट नेवी का पूर्व अधिकारी बताया जाता है। उसने समाज में एक प्रतिष्ठित ज्योतिषी और 'दैवी शक्तियों' के जानकार के रूप में अपनी पहचान बनाई थी और अपने प्रभाव का एक अनोखा रहस्यलोक बनाया था।

पीड़िता का आरोप है कि पूजा-पाठ करने

के बहाने, 67 साल के इस ज्योतिषी ने उसे नशीला पदार्थ खिलाया, उसे सम्मोहित किया और उसके विश्वास का गलत फायदा उठाकर उसका यौन शोषण किया। आरोपी ज्योतिष नासिक के पॉश इलाके कनाडा कॉर्नर में अपना ऑफिस चलाता था और साथ ही सिन्नर के मिरगांव में मंदिर और एक आलीशान फार्महाउस का मालिक था। पुलिस के अनुसार, खरात पर आरोप है कि उसने महिलाओं को उनकी निजी समस्याओं के समाधान का झांसा दिया और 'पूजा-पाठ' करने के नाम पर उसे नशीला पदार्थ दिया और उन्हें सम्मोहित (हिप्नोटाइज) कर उनके साथ दुष्कर्म किया।

सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि यह मामला सिर्फ एक पीड़िता तक सीमित नहीं है। मीडिया रिपोर्ट में कहा गया है कि इस बाबा के फार्म हाउस से 58 महिलाओं के संदिग्ध वीडियो मिले हैं। जांच में खुलासा हुआ है कि आरोपी ने अपने ऑफिस और फार्म हाउस में गुप्त कैमरे लगा रखे थे। पुलिस को छानबीन में एक पेन ड्राइव भी मिली है, इसमें 58 अलग-अलग महिलाओं के आपत्तिजनक वीडियो क्लिप्स होने की बात सामने आई है। पुलिस के मुताबिक, वह महिलाओं को डराने के लिए तंत्र-मंत्र और परिवार को नुकसान पहुंचाने की धमकी देता था।

राज्य सरकार ने इस मामले की जांच के लिए आईपीएस अधिकारी तेजस्विनी सतपुते की अगुवाई में एक विशेष जांच दल (एसआईटी) का गठन किया है। नासिक क्राइम ब्रांच यूनिट 1 आरोपी से बरामद किए गए आपत्तिजनक वीडियो और दस्तावेजों की गहन जांच कर रही है। पुलिस के मुताबिक, आरोपी नासिक में ह्यओकस प्रॉपर्टी डीलर्स एंड डेवलपर्स' नाम से एक दफ़्तर चलाता था। हालांकि, आरोप है कि वहां रियल एस्टेट का नहीं, बल्कि अपराध का धंधा चलता था। बताया जाता है कि आरोपी का नासिक के पॉश इलाके में रियल एस्टेट ऑफिस होने के साथ-साथ मीरगांव में ईशान्येश्वर नाम का एक आलीशान आश्रम और मंदिर भी है। सूत्रों के अनुसार, यहां बड़े-बड़े रसूखदार लोग दर्शन के लिए आते थे। पुलिस अब इस बात की जांच कर रही है कि इस नेटवर्क के पीछे और कौन-कौन से चेहरे शामिल हैं और यह काला कारोबार कब से चल रहा था।

ऐसी चर्चा है कि उसके राजनीतिक संबंध दिल्ली से लेकर महाराष्ट्र की सत्ता के गलियारों तक फैले हुए हैं। मीरगांव में उसका 'ईशान्येश्वर मंदिर' और एक आलीशान आश्रम है, जहां अक्सर जाने-माने और प्रभावशाली लोग दर्शन करने आते थे। नासिक

के सिन्नर में स्थित श्री ईशान्येश्वर मंदिर ट्रस्ट के चेयरमैन के तौर पर, खरात को जाने-माने राजनेताओं, मशहूर हस्तियों और बड़े कारोबारियों के आध्यात्मिक गुरु के रूप में व्यापक पहचान मिली थी।

आरोपी की गिरफ्तारी भी किसी फिल्मी सीन से कम नहीं थी। पुलिस ने गोपनीय ऑपरेशन के तहत रात में उसके फार्महाउस के बाहर 'चोर-चोर' चिल्लाकर अफरा-तफरी मचाई और इसी बहाने घर में प्रवेश किया और सीधे बेडरूम से आरोपी को गिरफ्तार कर लिया। छापेमारी के दौरान पुलिस ने खरात के ठिकाने से पिस्तौल, जिंदा कारतूस और कई संदिग्ध दस्तावेज भी बरामद किए हैं। बताया जा रहा है कि कई राजनेता, सेलिब्रिटी और कारोबारी उसके संपर्क में थे जो उसके मंदिर और फार्महाउस पर आते जाते थे। इसी कारण यह मामला अब राजनीतिक विवाद का रूप भी ले चुका है।

इस मामले ने अब एक राजनीतिक तूफान भी खड़ा कर दिया है क्योंकि कई राजनेता और जानी-मानी हस्तियां पहले भी इस ज्योतिषी से मिलने आ चुकी थीं। शिव सेना उद्धव ठाकरे गुट की नेता सुषमा अंधारे ने कहा, 'क्या उन लोगों के पैर पूजे जाने चाहिए जो महिलाओं का शोषण करते हैं? हम मांग करते हैं कि उपमुख्यमंत्री इस आचरण का संज्ञान लें।' बहरहाल, नासिक का यह मामला सिर्फ एक आपराधिक घटना नहीं, बल्कि समाज में अंधविश्वास और भरोसे के दुरुपयोग का खतरनाक उदाहरण के तौर पर पेश किया जा रहा है।

नवंबर 2022 में, जब पीड़िता अनुष्ठान पर चर्चा करने के लिए नासिक में कनाडा कॉर्नर में नकली बाबा संदिग्ध अशोक खरात के कार्यालय में अकेली गई थी, तो बाबा ने इस अवसर का लाभ उठाकर उसे कार्यालय के कक्ष में बुलाया, उसे प्रसाद के रूप में पेड़ा दिया और फिर उसे तांबे के बर्तन से पानी दिया। तब प्रभु का क्रोध तुम पर होगा और तुम्हारा मंगेतर मर जाएगा, मैं तुम्हें एक तरह से पवित्र कर रहा हूँ.. शिकायतकर्ता ने कहा कि उसे डरा-धमकाकर शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया गया। बताया जाता है कि पीड़िता को 2019 में कनाडा कॉर्नर स्थित उनके ऑफिस में अशोक खरात से मिलवाया गया था। उस समय उनके दादा भी उनके साथ थे। 'मेरे पास दैवीय शक्ति है, और उस शक्ति की शक्ति से मैं आपके जीवन में आने वाली बाधाओं को दूर करूंगा, आपकी शादी एक धनी परिवार में होगी, आपका करियर होगा, आपको मेरे पास आना होगा और कुछ अनुष्ठान करने होंगे। उसने उसका विश्वास अर्जित किया था। फिर 2021 में पीड़िता की सगाई गांव में हुई। बाद में जब वह टूट गया तो खरात बाबा ने फिर से 50,000 रुपये नकद लेकर 'पुष्करराज' का पत्थर दिया। यह पत्थर 'सिद्ध हो गया है और इसे फिर से अपने गले में पहनना शुरू करो, तुम धन्य हो जाओगे... 2022 में उसने दूसरी शादी की और पीड़िता की सगाई हो गई और शादी का रस्म हो गया। शिकायतकर्ता ने बताया कि शादी की खबर खरात को बताई गई, जिसके बाद दंपति ने पीड़िता को आशीर्वाद लेने के लिए कार्यालय बुलाया और फिर से उसी तरह से प्रताड़ित किया।

यह मामला सिर्फ एक अपराध की कहानी नहीं है, बल्कि समाज के उस हिस्से को भी उजागर करता है जहां लोग बिना जांचे-परखे किसी पर भी भरोसा कर लेते हैं। फिलहाल अशोक खरात पुलिस हिरासत में है और उससे लगातार पूछताछ की जा रही है। पुलिस का कहना है कि इस केस में जो भी तथ्य सामने आएंगे, उनके आधार पर आगे की कार्रवाई की जाएगी। साथ ही, जब्त किए गए वीडियो और डिजिटल सबूतों की फॉरेंसिक जांच भी अहम भूमिका निभाएगी। इससे यह साफ हो सकेगा कि मामला कितना बड़ा है और इसमें और कौन-कौन शामिल हो सकते हैं।

सलाखों के पीछे भी असुरक्षित जीवन?

@ एड. किशन सनमुखदास भावनानी

वैश्विक स्तर पर आधुनिक लोकतांत्रिक समाज में जेल का उद्देश्य केवल अपराधी को दंडित करना नहीं, बल्कि उसे सुधारना और पुनर्वास के लिए तैयार करना भी होता है। परंतु जब जेलें स्वयं ही भय,बीमारी और उपेक्षा का केंद्र बन जाएं,तो यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि क्या हम वास्तव में न्याय कर रहे हैं या एक और अन्याय को जन्म दे रहे हैं? सलाखों के पीछे भी सेफ नहीं?, यह केवल एक भावनात्मक प्रश्न नहीं, बल्कि कठोर वास्तविकता का दर्पण है। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के अनुसार, कैदियों से उनका स्वतंत्रता का अधिकार तो छीना जा सकता है,लेकिन उनका जीवन, स्वास्थ्य और गरिमा का अधिकार नहीं। इसके बावजूद भारत सहित दुनियाँ के कई देशों में जेलों की स्थिति चिंताजनक बनी हुई है।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित नेल्सन मंडेला नियम (यू एन स्टैंडर्ड मिनिमम रूल्स फॉर द ट्रीटमेंट ऑफ प्रिजनर्स) स्पष्ट रूप से कहते हैं कि कैदियों के साथ मानवीय व्यवहार किया जाना चाहिए। उन्हें पर्याप्त भोजन,स्वच्छ पानी,स्वास्थ्य सुविधाएं और मानसिक स्वास्थ्य सहायता मिलनी चाहिए। लेकिन व्यवहारिक धरातल पर इन सिद्धांतों और वास्तविकता के बीच गहरी खाई दिखाई देती है। जेलें, जो सुधार गृह मानी जाती हैं,अक्सर प्रताड़ना, हिंसा और उपेक्षा के केंद्र बन जाती हैं। यह स्थिति केवल विकासशील देशों तक सीमित नहीं है, बल्कि विकसित देशों में भी कई बार ऐसी घटनाएं सामने आती रही हैं।

साथियों बात अगर हम भारत में जेलों की भीड़

एक गंभीर संरचनात्मक संकट को समझने की करें तो,भारत की जेल व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या है,क्षमता से अधिक भीड़। कई राज्यों में जेलों की ऑक्यूपेंसी दर 150 प्रतिशत से लेकर 200 प्रतिशत तक पहुंच चुकी है। उदाहरण के तौर पर, दिल्ली की जेलों में 200 प्रतिशत तक कैदी भरे हुए हैं, जबकि उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश में यह आंकड़ा 150 प्रतिशत से अधिक है।

इस भीड़ का सबसे बड़ा कारण है विचाराधीन कैदियों की अत्यधिक संख्या। आंकड़ों के अनुसार, भारत के लगभग 73.5 प्रतिशत कैदी ऐसे हैं जिनका अभी दोष सिद्ध नहीं हुआ है और वे केवल ट्रायल का इंतजार कर रहे हैं। यह स्थिति न्यायिक प्रणाली की

धीमी गति और मामलों के लंबित रहने का सीधा परिणाम है।

साथियों बात अगर हम विचाराधीन कैदीः

न्याय से पहले सजा? इसको समझने की करें तो,विचाराधीन कैदी वह होते हैं जिन्हें अभी अदालत ने दोषी नहीं ठहराया है, फिर भी वे वर्षों तक जेल में बंद रहते हैं। यह स्थिति निर्दोषता की धारणा (प्रेसम्शन ऑफ इनोसेंस) के सिद्धांत के विपरीत है। न्यायिक देरी के कारण कई कैदी अपने संभावित सजा से अधिक समय जेल में बिता देते हैं। यह न केवल उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है, बल्कि न्याय व्यवस्था की विश्वसनीयता पर भी सवाल खड़ा करता है।

जेलों में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय है। डॉक्टरों और चिकित्सा कर्मचारियों के लगभग 30-40 प्रतिशत पद खाली हैं। दिल्ली जैसी जगहों पर प्रति 200 कैदियों पर केवल एक डॉक्टर उपलब्ध है। इसका परिणाम यह होता है कि गंभीर बीमारियों का समय पर इलाज नहीं हो पाता। अस्वच्छता और भीड़ भाड़ के कारण टीबी, एचआईवी और हेपेटाइटिस जैसी संक्रामक बीमारियां तेजी से फैलती हैं। वर्ष 2024 के पहले नौ महीनों में भारत में न्यायिक हिरासत में 1,558 मौतें दर्ज की गईं,यह आंकड़ा केवल संख्या नहीं, बल्कि एक गंभीर मानवीय संकट का संकेत है। इन मौतों के पीछे मुख्य कारण हैं, बीमारियां, आत्महत्याएं और चिकित्सा सुविधाओं की बहुत हद तक कमी।

साथियों बात अगर हम छत्तीसगढ़ का मामला

एक राज्य, कई सवाल इसको समझने की करें तो छत्तीसगढ़ की जेलों में पिछले 4 वर्षों में 285 कैदियों की मौत का मामला पूरे देश को झकझोर देने वाला है। इनमें से 90 मौतें केवल 2022 में हुईं और 66 मौतें जनवरी 2025 से जनवरी 2026 के बीच दर्ज की गईं। राज्य सरकार ने इन मौतों के पीछे आत्महत्या और गंभीर बीमारियों को कारण बताया है। इस मामले में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने स्वतः संज्ञान लेते हुए राज्य सरकार से विस्तृत रिपोर्ट मांगी है। आयोग ने जेलों में भीड़ भाड़, डॉक्टरों की कमी और प्रशासनिक लापरवाही को संभावित कारण बताया है। यदि ये आरोप सही पाए जाते हैं,तो यह मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन माना जाएगा।

साथियों बात अगर हम न्यायपालिका की सक्रियता

सुधार की दिशा में कदम को समझने की करें तो हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को जेलों की स्थिति पर ताजा आंकड़े प्रस्तुत करने का निर्देश 26 मई 2026 तक सबमिट करने को दिया है। न्यायमूर्ति विक्रम नाथ और संदीप मेहता की पीठ ने जेलों की क्षमता भीड़भाड़ और महिला कैदियों के लिए उपलब्ध सुविधाओं का विस्तृत विवरण मांगा है। यह कदम दशार्ता है कि न्यायपालिका इस मुद्दे को गंभीरता से ले रही है। विशेष रूप से महिला कैदियों और उनके साथ रहने वाले बच्चों की स्थिति पर ध्यान देना एक सकारात्मक पहल है, क्योंकि यह वर्ग अक्सर नीति निर्माण में उपेक्षित रह जाता है।

साथियों बात अगर हम मानसिक स्वास्थ्य और आत्म हत्याएंः

अदृश्य संकट इसको समझने की करें तो जेलों में मानसिक स्वास्थ्य एक बड़ा लेकिन अनदेखा मुद्दा है। भीड़भाड़, पारिवारिक दूरी, सामाजिक कलंक और अनिश्चित भविष्य कैदियों को मानसिक रूप से कमजोर बना देता है। यही कारण है कि जेलों में आत्महत्या के मामले लगातार बढ़ रहे हैं। ग्लोबल प्रिजन ट्रेंड्स 2025 रिपोर्ट के अनुसार, दुनिया भर में जेलों के भीतर आत्महत्या और हिंसा के मामलों में वृद्धि हुई है। यह केवल एक देश की समस्या नहीं, बल्कि वैश्विक स्तर पर जेल सुधार की आवश्यकता को दशार्ता है।

साथियों बात अगर हम संचार और मानवीय संपर्क

एक नई पहल इसको समझने की करें तो, कैदियों के मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए संचार के साधनों को बढ़ाना आवश्यक है। इसी दिशा में भारत सरकार के रक्षा मंत्रालय द्वारा एक प्रस्ताव लाया गया है, जिसमें कैदियों को अपने परिवारजनों से मुफ्त वीडियो और ऑडियो कॉल के माध्यम से संवाद करने की अनुमति देने की बात कही गई है। यह पहल कैदियों को मानसिक रूप से मजबूत बनाए रखने और उनके सामाजिक संबंधों को बनाए रखने में मदद कर सकती है। आधुनिक तकनीक का उपयोग जेल सुधार के लिए एक प्रभावी माध्यम बन सकता है।

साथियों बात अगर हम सुधार की दिशा में आवश्यक कदम को समझने की करें तो जेल सुधार के लिए बहु आयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। सबसे पहले, न्यायिक प्रक्रिया को तेज करना होगा ताकि विचाराधीन कैदियों की संख्या कम हो सके। इसके लिए फास्ट-ट्रैक कोर्ट, डिजिटल सुनवाई और वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र को बढ़ावा देना होगा।

दूसरा, जेलों की क्षमता बढ़ाने और नए सुधार गृहों का निर्माण करना आवश्यक है। तीसरा, स्वास्थ्य सुविधाओं को मजबूत करना होगा,डॉक्टरों की भर्ती, नियमित स्वास्थ्य जांच और मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करना होगा। चौथा कैदियों के लिए कौशल विकास और शिक्षा कार्यक्रम शुरू करने होंगे ताकि वे समाज में पुनः स्थापित हो सकें। 5वां, जेल प्रशासन में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करनी होगी, जिसमें स्वतंत्र निगरानी तंत्र की स्थापना महत्वपूर्ण होगी।

साथियों बात अगर हम अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

एक साझा चुनौती को समझने की करें तो जेलों की बदहाल स्थिति केवल भारत तक सीमित नहीं है। अमेरिका,ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका और फिलीपींस जैसे देशों में भी जेलों में भीड़भाड़, हिंसा और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी जैसी समस्याएं मौजूद हैं। हालांकि, कुछ देशों ने सुधार के लिए प्रभावी कदम उठाए हैं। उदाहरण के लिए, नॉर्वे की जेल व्यवस्था को दुनिया में सबसे मानवीय माना जाता है, जहां कैदियों को पुनर्वास और कौशल विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यह मॉडल अन्य देशों के लिए प्रेरणा बन सकता है।

अतः अगर हम उपरोक्त पूरे विवरण का

अध्ययन कर इसका विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि न्याय का असली अर्थ,जेलें किसी भी सभ्य समाज का दर्पण होती हैं। यदि जेलों में मानवाधिकारों का उल्लंघन हो रहा है, तो यह पूरे समाज की विफलता का संकेत है। सजा का उद्देश्य प्रतिशोध नहीं, बल्कि सुधार और पुनर्वास होना चाहिए। सलाखों के पीछे भी सेफ नहीं? यह प्रश्न हमें आत्ममंथन करने के लिए मजबूर करता है। क्या हम एक ऐसे समाज का निर्माण कर रहे हैं जहां न्याय केवल कागजों तक सीमित है, या हम वास्तव में एक मानवीय और न्यायपूर्ण व्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं? समय आ गया है कि जेल सुधार को प्राथमिकता दी जाए,क्योंकि न्याय केवल अदालतों में नहीं, बल्कि जेलों की दीवारों केभीतर भी सुनिश्चित होना चाहिए।

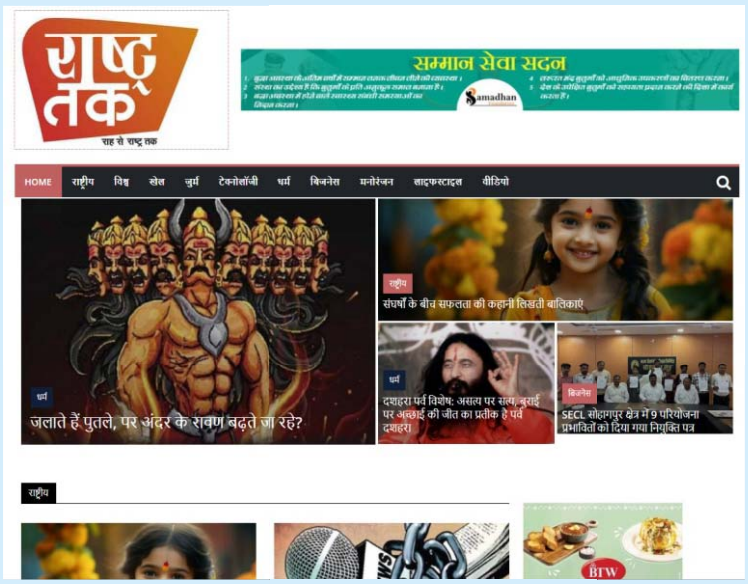

राष्ट्रीय | खेल | विश्व | जुर्म | टेक्नोलॉजी | बिजनेस | धर्म | और भी बहुत कुछ

पढ़ें

अपनी पसंदीदा खबरें

rashtratak.com पर

राष्ट्र तक
राह से राष्ट्र तक

राष्ट्रीय हिंदी पत्रिका
राष्ट्र समाज
आपकी आवाज

Samadhan Foundation

for news coverage and programsplease contact us on below Mobile No. 9953772767,9911662767

https://twitter.com/rashtratak https://www.facebook.com/rashtrataknews

rashtratak@gmail.com
www.rashtrasamaj.com

A Digital News Platform of
RASTRA SAMJA

नीतिगत लापरवाही से गहराता एलपीजी संकट

@ अवनीश कुमार गुप्ता

भारत आज एक ऐसे ऊर्जा संकट के मुहाने पर खड़ा है, जिसकी आहट लंबे समय से सुनाई दे रही थी, लेकिन नीतिगत सुस्ती और दूरदृष्टि के अभाव ने इसे एक वास्तविक खतरे में बदल दिया है। एलपीजी (रसोई गैस) की कमी केवल एक आपूर्ति समस्या नहीं है, बल्कि यह हमारे ऊर्जा प्रबंधन, आयात-निर्भरता और भंडारण क्षमता की गहरी खामियों का आईना है। हालिया आंकड़े बताते हैं कि देश में एलपीजी की खपत में जबरदस्त वृद्धि हुई है, विशेषकर ग्रामीण और गरीब तबकों में, जहां स्वच्छ ईंधन की पहुंच बढ़ाने के लिए सरकारी योजनाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लेकिन इस सफलता के साथ समानांतर बुनियादी ढांचे का विकास नहीं हुआ, जिसके कारण आज मांग और आपूर्ति के बीच खतरनाक असंतुलन पैदा हो गया है।

स्थिति की गंभीरता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत की कुल एलपीजी खपत का बड़ा हिस्सा आयात पर निर्भर है और इनमें से लगभग 85 प्रतिशत आयात होर्मुज जलडमरूमध्य से होकर आता है। यह वही क्षेत्र है जो आज भू-राजनीतिक तनाव का केंद्र बना हुआ है। ऐसे में किसी भी तरह की सैन्य या राजनीतिक हलचल सीधे भारत की ऊर्जा सुरक्षा को प्रभावित कर सकती है। वैश्विक संघर्षों का स्थानीय रसोई तक असर पहुंचना इस बात का संकेत है कि हमने अपनी ऊर्जा रणनीति को अत्यधिक बाहरी कारकों के भरोसे छोड़ दिया है। यह निर्भरता केवल आर्थिक जोखिम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा का भी प्रश्न बन चुकी है।

और भी चिंताजनक तथ्य यह है कि भारत के पास एलपीजी का भूमिगत भंडारण अत्यंत सीमित है, जो कुल मिलाकर केवल लगभग 1.4 लाख टन है—यह देश की दो दिन की खपत से भी कम है। एक ऐसे देश के लिए, जहां मासिक खपत लगभग 30 लाख टन के आसपास है, यह स्थिति किसी भी आपातकालीन परिस्थिति में पूरी तरह असहाय

सरकार द्वारा चलाई गई उज्ज्वला योजना जैसे कार्यक्रमों ने निश्चित रूप से सामाजिक दृष्टि से सकारात्मक परिवर्तन लाया है। करोड़ों परिवारों को स्वच्छ ईंधन उपलब्ध कराना एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। लेकिन इस योजना ने मांग को तेजी से बढ़ाया, जबकि आपूर्ति और भंडारण के बुनियादी ढांचे में समान गति से निवेश नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, आज हम एक ऐसी स्थिति में हैं जहां मांग को पूरा करने के लिए आयात पर अत्यधिक निर्भरता बढ़ गई है।

बना सकती है। इसके विपरीत, कच्चे तेल के मामले में भारत ने रणनीतिक भंडार विकसित किए हैं, जो लगभग दो महीने की खपत को संभाल सकते हैं। सवाल यह उठता है कि जब तेल के लिए यह दूरदर्शिता दिखाई गई, तो एलपीजी जैसे आवश्यक घरेलू ईंधन के लिए क्यों नहीं?

नीतिगत असंतुलन की एक और परत उजागर होती है जब हम यह देखते हैं कि एलपीजी वितरण प्रणाली को 'ऑपरेशनल फ्लो' के आधार पर डिजाइन किया गया है, न कि दीर्घकालिक भंडारण को ध्यान में रखते हुए। यानी जैसे ही आपूर्ति में हल्की सी भी बाधा आती है, इसका सीधा असर बाजार और उपभोक्ताओं पर पड़ता है। यह मॉडल एक स्थिर और सुरक्षित वैश्विक वातावरण में तो काम कर सकता है, लेकिन आज के अनिश्चित भू-राजनीतिक परिदृश्य में यह पूरी तरह अप्रासंगिक और जोखिमपूर्ण साबित हो रहा है। सरकार द्वारा चलाई गई उज्ज्वला योजना जैसे कार्यक्रमों ने निश्चित रूप से सामाजिक दृष्टि से सकारात्मक परिवर्तन लाया है। करोड़ों परिवारों को स्वच्छ ईंधन उपलब्ध कराना एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। लेकिन इस योजना ने मांग को तेजी से बढ़ाया, जबकि आपूर्ति और भंडारण के बुनियादी ढांचे में समान गति से निवेश नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, आज हम एक ऐसी स्थिति में हैं जहां मांग को पूरा करने के लिए आयात पर अत्यधिक निर्भरता बढ़ गई है, और घरेलू स्तर पर कोई ठोस सुरक्षा कवच मौजूद नहीं है।

अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी ने पहले ही भारत में गैस भंडारण की कमी को एक संरचनात्मक कमजोरी बताया था, लेकिन इस चेतावनी को गंभीरता से नहीं लिया गया। यूरोप जैसे क्षेत्र, जहां प्राकृतिक गैस की खपत अधिक है, वहां 25 प्रतिशत तक वार्षिक खपत का भंडारण संभव है। इसके विपरीत भारत का आंकड़ा नगण्य है। यह तुलना केवल आंकड़ों का अंतर नहीं दिखाती, बल्कि नीति-निर्माण की प्राथमिकताओं में अंतर को भी उजागर करती है। समाधान की दिशा में सबसे पहला और महत्वपूर्ण कदम है दीर्घकालिक रणनीतिक भंडारण का विकास। भारत के पास भौगोलिक रूप से ऐसे क्षेत्र मौजूद हैं जहां भूमिगत गैस भंडारण संभव है, जैसे प्रायद्वीपीय शील्ड क्षेत्र और राजस्थान के नमक भंडार। इन स्थानों पर आधुनिक तकनीक के माध्यम से बड़े पैमाने पर एलपीजी कैवर्न बनाए जा सकते हैं, जो आपातकालीन परिस्थितियों में आपूर्ति को स्थिर बनाए रखेंगे। इसके साथ ही, निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित करना भी आवश्यक है ताकि निवेश और तकनीकी विशेषज्ञता दोनों का लाभ उठाया जा सके।

दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है आयात स्रोतों का विविधीकरण। वर्तमान में भारत का झुकाव कुछ सीमित क्षेत्रों की ओर है, जिससे जोखिम बढ़ जाता है। नए आपूर्तिकताओं के साथ दीर्घकालिक समझौते, वैकल्पिक समुद्री मार्गों का विकास और घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देना इस दिशा में जरूरी कदम होंगे। साथ ही, नवीकरणीय ऊर्जा और बायोगैस जैसे विकल्पों को भी प्रोत्साहित करना चाहिए, ताकि एलपीजी पर निर्भरता धीरे-धीरे कम की जा सके।

तीसरा और शायद सबसे महत्वपूर्ण पहलू है नीति-निर्माण में दूरदर्शिता और समन्वय। ऊर्जा सुरक्षा को केवल आर्थिक मुद्दा मानने की बजाय इसे राष्ट्रीय सुरक्षा के दायरे में लाना होगा। विभिन्न मंत्रालयों और एजेंसियों के बीच बेहतर तालमेल स्थापित करना, डेटा-आधारित निर्णय लेना और वैश्विक परिदृश्य के अनुसार रणनीतियों को लगातार अपडेट करना समय की मांग है।

अंततः, एलपीजी संकट हमें यह सिखाता है कि केवल योजनाओं की घोषणा और अल्पकालिक उपलब्धियों से काम नहीं चलता। यदि बुनियादी ढांचे और दीर्घकालिक रणनीति पर समान ध्यान नहीं दिया गया, तो ऐसी सफलताएं ही भविष्य के संकट का कारण बन जाती हैं। भारत के पास संसाधन, तकनीक और मानव क्षमता—तीनों मौजूद हैं, जरूरत है तो केवल एक स्पष्ट दृष्टि और ठोस राजनीतिक इच्छाशक्ति की। यदि अब भी सबक नहीं लिया गया, तो आने वाले समय में यह संकट और गहरा हो सकता है, और इसकी कीमत देश के आम नागरिक को अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में चुकानी पड़ेगी।

धर्म बदलते ही खत्म होगा एससी दर्जा

@ अजय कुमार

भारत के सुप्रीम कोर्ट ने मंगलवार को एक ऐसा फैसला सुनाया जिसने सामाजिक न्याय की पूरी बहस को फिर से गरमा दिया है। अदालत ने साफ कहा कि हिंदू, सिख या बौद्ध धर्म के अलावा किसी और धर्म में जाने वाला व्यक्ति अनुसूचित जाति का दर्जा तुरंत खो देता है। यह फैसला आंध्र प्रदेश हाईकोर्ट के पुराने आदेश को बरकरार रखते हुए आया, जिसमें गुंटूर जिले के चिंतादा आनंद नाम के एक पादरी की याचिका खारिज की गई थी। चिंतादा आनंद ने कुछ लोगों पर जातिगत गाली-गलौज और हमले का आरोप लगाते हुए एससी-एसटी अत्याचार निवारण कानून के तहत मुकदमा दर्ज कराया था, लेकिन आरोपियों ने कहा कि वह तो दशक से ज्यादा समय से ईसाई धर्म अपनाकर पादरी का काम कर रहे हैं, इसलिए उन्हें अब वह संरक्षण नहीं मिल सकता। हाईकोर्ट ने इस दलील को माना और अब सुप्रीम कोर्ट की दो जजों की पीठ ने भी वही रुख अपनाया। जस्टिस प्रशांत कुमार मिश्रा और जस्टिस एनवी अंजारिया की बेंच ने कहा कि अपीलकर्ता के ईसाई बनने और सक्रिय रूप से प्रार्थनाएं कराने के सबूत साफ हैं, इसलिए एससी का दर्जा खत्म माना जाएगा। यह फैसला कोई नया कानून नहीं बनाता, बल्कि 1950 के संविधान (अनुसूचित जाति) आदेश की धारा 3 को दोहराता है। उस आदेश में लिखा है कि अनुसूचित जाति का दर्जा सिर्फ उन लोगों को मिलता है जो हिंदू, सिख या बौद्ध धर्म मानते हैं। कोई अन्य धर्म अपनाने पर जन्म से मिला यह हक स्वतः खत्म हो जाता है। कोर्ट ने जोर देकर कहा कि यह प्रतिबंध पूर्ण है, इसमें कोई छूट या अपवाद नहीं। चाहे व्यक्ति का जन्म किसी भी दलित परिवार में हुआ हो, अगर वह ईसाई या मुस्लिम बन जाता है तो वह अब

चिंतादा आनंद ने कुछ लोगों पर जातिगत गाली-गलौज और हमले का आरोप लगाते हुए एससी-एसटी अत्याचार निवारण कानून के तहत मुकदमा दर्ज कराया था, लेकिन आरोपियों ने कहा कि वह तो दशक से ज्यादा समय से ईसाई धर्म अपनाकर पादरी का काम कर रहे हैं, इसलिए उन्हें अब वह संरक्षण नहीं मिल सकता। हाईकोर्ट ने इस दलील को माना और अब सुप्रीम कोर्ट की दो जजों की पीठ ने भी वही रुख अपनाया।

अनुसूचित जाति का सदस्य नहीं रहता। ईसाई धर्म में जाति की कोई व्यवस्था नहीं मानी जाती, इसलिए जातिगत अत्याचार का कानून भी उस पर लागू नहीं होता। चिंतादा आनंद गांव में घर-घर रविवार की प्रार्थनाएं कराते थे, पादरी के रूप में काम करते थे। कोर्ट ने इन तथ्यों को देखते हुए कहा कि घटना के समय वह ईसाई धर्म का पालन कर रहे थे, इसलिए एससी-एसटी एक्ट के तहत शिकायत का आधार ही नहीं बनता।

इस फैसले की गहराई समझने के लिए हमें संविधान की मूल भावना को याद करना होगा। डॉक्टर भीमराव आंबेडकर और संविधान सभा ने अनुसूचित जाति को विशेष दर्जा इसलिए दिया क्योंकि हिंदू समाज में सदियों से छुआछूत और अस्पृश्यता का भयानक अन्याय चला था। यह दर्जा ऐतिहासिक दमन की याद दिलाता है, न कि किसी व्यक्तिगत पसंद का। 1950 का आदेश शुरू में सिर्फ हिंदुओं के लिए था। बाद में सिखों को 1956 में और बौद्धों को 1990 में शामिल किया गया क्योंकि इन धर्मों में भी जातीय संरचना बनी रही।

लेकिन इस्लाम और ईसाई धर्म खुद को जातिविहीन बताते हैं। कोर्ट ने कहा कि अगर कोई इनमें चला जाता है तो ऐतिहासिक पीड़ा का आधार भी खत्म हो जाता है। इसलिए आरक्षण, सरकारी नौकरियां, शिक्षा में सीटें, छात्रवृत्तियां और कानूनी सुरक्षा जैसे लाभ अब नहीं मिल सकते। फैसले के बाद सबसे बड़ा सवाल यह उठता है कि क्या इससे धर्मांतरण रुकेगा? अनुच्छेद 25 के तहत धर्म बदलना हर भारतीय का मौलिक अधिकार है। कोई भी व्यक्ति अपनी आस्था बदल सकता है, प्रचार कर सकता है। लेकिन क्या यह अधिकार राज्य द्वारा दिए गए आरक्षण जैसे लाभों पर भी लागू होता है? सुप्रीम कोर्ट ने जवाब दिया नहीं। लाभ उस धर्म में झेली गई पीड़ा से जुड़े हैं, न कि व्यक्ति की नई आस्था से। अगर कोई दलित ईसाई बनकर भी पुराना एससी सर्टिफिकेट दिखाकर फायदा उठाता रहे तो असली हिंदू दलितों का हक छिन जाएगा। कोटा सीमित है, संसाधन सीमित हैं। नई आबादी जुड़ने से मौजूदा लाभार्थियों का हिस्सा कम हो जाएगा। राजनीति में भी असर पड़ेगा। आरक्षित सीटों पर उम्मीदवारों का चरित्र बदल सकता है। जो लोग धर्म बदलकर लाभ लेते रहे, उनके लिए अब रास्ता बंद हो गया।

लेकिन यह मुद्दा इतना सरल भी नहीं है। लंबे समय से एक बड़ा विवाद चल रहा है क्या ईसाई और मुस्लिम दलितों को भी अनुसूचित जाति का दर्जा देना चाहिए? 2007 में रंगनाथ मिश्रा आयोग ने सिफारिश की थी कि सभी धर्मों के दलितों को आरक्षण मिले क्योंकि सामाजिक पिछड़ापन धर्म बदलने से नहीं मिटता। लेकिन केंद्र सरकार ने इस रिपोर्ट को खारिज कर दिया। सरकार का कहना था कि आयोग ने बिना जमीनी अध्ययन के सिफारिश कर दी। अब पूर्व मुख्य न्यायाधीश के जी बालकृष्णन की अध्यक्षता में नया आयोग इस पूरे मसले पर गहराई से विचार कर रहा है। सुप्रीम कोर्ट में भी

कई याचिकाएं लंबित हैं। इस फैसले ने उस बहस को और तेज कर दिया है। फिलहाल कोर्ट ने कहा कि बदलाव अगर करना है तो संसद करे, अदालत नहीं।

1950 का आदेश अभी पूरी तरह लागू है। सामाजिक रूप से देखें तो धर्मांतरण अक्सर बेहतर जीवन की तलाश में होता है। कई दलित परिवार सोचते हैं कि हिंदू समाज में मिलने वाला अपमान ईसाई या मुस्लिम बनकर कम हो जाएगा। लेकिन हकीकत में कई जगहों पर जाति की छाया उन नए धर्मों में भी दिखती है। फिर भी कानून साफ है। अगर कोई व्यक्ति वापस हिंदू हो जाता है और उसका समुदाय उसे स्वीकार कर लेता है तो दर्जा बहाल हो सकता है। लेकिन एक साथ दो धर्मों का पालन करके एससी का दावा नहीं किया जा सकता। कोर्ट ने इस मामले में सबूतों पर जोर दिया। अगर कोई पादरी का काम कर रहा है, प्रार्थनाएं आयोजित कर रहा है तो वह ईसाई ही माना जाएगा। चिंतादा आनंद के मामले में यही हुआ।

आरक्षण का मकसद सामाजिक समानता लाना है, न कि धर्म बदलने को बढ़ावा देना। अगर बदलने से भी लाभ मिलते रहें तो मूल उद्देश्य ही खत्म हो जाएगा। सरकारी नौकरियों, विधानसभाओं और लोकसभा में सीटें उन लोगों के लिए आरक्षित हैं जिन्होंने हिंदू समाज में दमन झेला। ईसाई या मुस्लिम बनकर वे अब उस दमन की श्रेणी से बाहर हो जाते हैं। हालांकि वे ओबीसी या आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग में शामिल हो सकते हैं अगर उनका समुदाय सूची में है, लेकिन एससी का विशेष दर्जा नहीं मिलेगा। यह फैसला उन लोगों के लिए भी चेतावनी है जो धर्मांतरण को सिर्फ फायदे का साधन बनाते हैं। सच्चा परिवर्तन आस्था से होना चाहिए, आरक्षण के लालच से नहीं।देश की एकता के नजरिए से भी यह फैसला अहम है। भारत विविधताओं का देश है, लेकिन संविधान ने सामाजिक न्याय को कुछ धर्मों तक सीमित रखा है।

अगर हर धर्म को एससी दर्जा दे दिया जाए तो पूरी आरक्षण व्यवस्था चरमरा सकती है। कोटा बढ़ाने से पहले आर्थिक और सामाजिक सर्वेक्षण जरूरी है। सरकार ने यही रुख अपनाया है। नया आयोग इसी दिशा में काम कर रहा है। फैसले से दलित समाज में दो धड़ों में बंटाव हो सकता है एक वे जो हिंदू रहकर संघर्ष कर रहे हैं, दूसरे वे जो धर्म बदल चुके हैं। लेकिन कोर्ट ने कहा कि कानून सबके लिए बराबर है। कोई भी व्यक्ति दो श्रेणियों का लाभ एक साथ नहीं ले सकता।

इस फैसले ने एक बार फिर साबित किया कि संविधान सर्वोच्च है। अदालत न भावनाओं से प्रभावित होती है, न राजनीतिक दबाव से। उसने 1950 के आदेश को दोहराया और कहा कि यह पूर्ण प्रतिबंध है। अब अगर बदलाव करना है तो संसद करे। चिंतादा आनंद की याचिका खारिज होने से उनका मुकदमा भी प्रभावित होगा। लेकिन इससे बड़े सवाल पर बहस शुरू हो गई है क्या सामाजिक पिछड़ापन धर्म से ऊपर है? जवाब अभी लंबित है, लेकिन फिलहाल संविधान की मूल भावना जीत गई। भारत जैसे देश में सामाजिक न्याय की राह हमेशा कठिन रही है। एक तरफ आरक्षण जरूरी है पिछड़ेपन को मिटाने के लिए, दूसरी तरफ इसके दुरुपयोग को रोकना भी उतना ही जरूरी। इस फैसले ने दुरुपयोग की एक बड़ी खिड़की बंद कर दी।

अब जरूरत है कि सरकार और समाज मिलकर उन दलितों की मदद करें जो बिना धर्म बदले संघर्ष कर रहे हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार की योजनाएं और मजबूत हों। जातिगत भेदभाव पर सख्ती बढ़े। तभी सच्चा बदलाव आएगा।सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला सिर्फ कानूनी नहीं, नैतिक भी है।

यह कहता है कि संविधान की रक्षा करो, उसकी भावना को मत तोड़ो। धर्म परिवर्तन व्यक्तिगत आस्था का मामला है, लेकिन राज्य के लाभ संवैधानिक सीमाओं में बंधे रहेंगे। यह फैसला देश को याद दिलाता है कि न्याय की राह पर चलते हुए संतुलन बनाए रखना होगा न तो धर्म की आड़ में लाभ लूटने दो, न ही असली दलितों का हक किसी को छीनने दो। सामाजिक न्याय की यह लड़ाई अभी जारी रहेगी, लेकिन संविधान की दीवार मजबूत बनी रहेगी।

दबदबा था... दबदबा है और दबदबा रहेगा' : बृजभूषण सिंह

जौनपुर में बैस क्षत्रिय होली मिलन समारोह में पूर्व सांसद बृजभूषण शरण सिंह ने कहा कि उनका 'दबदबा' कायम रहेगा. धनंजय सिंह और बृजेश सिंह की मौजूदगी में उन्होंने विरोधियों पर निशाना साधा और उन्होंने युवाओं को आचरण सुधारने की नसीहत भी दी. यूपी के जौनपुर में बैस क्षत्रिय राष्ट्रीय एकता मंच के होली मिलन समारोह में पूर्व बीजेपी सांसद बृजभूषण शरण सिंह मुख्य अथिति के रूप में शामिल हुए. इस दौरान उन्होंने कहा- 'धनंजय सिंह को पूरी कथा पता है कि आखिर बृजभूषण का दबदबा कैसे था और कैसे रहेगा.' इस होली मिलन समारोह कार्यक्रम में बृजभूषण के अलावा जौनपुर के पूर्व बाहुबली सांसद धनंजय सिंह और एमएलसी बृजेश सिंह प्रिंसु मौजूद भी थे.

गौरतलब है कि होली मिलन समारोह में जौनपुर पहुंचे गोंडा के पूर्व सांसद बृजभूषण शरण सिंह ने समां बांध दिया. पहले उन्होंने होली मिलन समारोह कार्यक्रम में गीत गाये. इसके बाद जब उनके बोलने की बारी आई तो उन्होंने अपने 'दबदबा' अंदाज को कायम रखा. उन्होंने बताया कि वह रोज सुबह उठते हैं और अपनी कमी ढूंढते हैं. उसके बाद उस कमी को दूर करते हैं. उन्होंने बताया कि जैसे पहले आल्हा गया जाता था कि 'एक उदल के जियरा पर के तीन लाख तलवार' वैसे ही कुछ तलवारें उनके ऊपर भी चमक रही थीं लेकिन दबदबा था दबदबा है और दबदबा रहेगा क्योंकि मैंने अपनी कमी को दूर किया. उन्होंने लोगों को बल, बुद्धि हासिल करने और आचरण में सुधार की नसीहत भी दी.

जनभावना का सम्मान कर नियमों में करें तत्काल सुधार : करण भूषण सिंह

कैसरगंज से भाजपा सांसद करण भूषण सिंह ने यूजीसी नियमों पर सफाई देते हुए कहा कि उनकी स्टैंडिंग कमेटी का इन नियमों के निर्माण से कोई संबंध नहीं है. उन्होंने यूजीसी से जनभावना के अनुरूप नियमों में सुधार की मांग की और शिक्षा को जातिगत संघर्ष से दूर रखने पर जोर दिया.

कैसरगंज से भाजपा सांसद करण भूषण सिंह ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (वक्रछ) के नए नियमों को लेकर मीडिया पर अपनी स्थिति स्पष्ट की है. उन्होंने स्पष्ट किया कि जिस स्टैंडिंग कमेटी के वे सदस्य हैं, उसका इन नियमों के निर्माण में कोई योगदान नहीं है. उन्होंने यह सफाई अपने सोशल मीडिया अकाउंट के जरिए दी, जो वायरल हो रही है. करण भूषण सिंह ने कहा कि वे जिस स्टैंडिंग कमेटी के सदस्य हैं, उसकी न तो इन नियमों के निर्माण में कोई भागीदारी थी और न ही वे संबंधित बैठक में उपस्थित हुए थे. उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि उन्होंने किसी तरह के दस्तावेज पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं. भाजपा सांसद ने कहा कि सोशल मीडिया और कुछ समाचार माध्यमों के जरिए उनके विचारों को लेकर भ्रम फैलाया जा रहा है, जो दुर्भाग्यपूर्ण है. उन्होंने मांग की कि यूजीसी जनभावनाओं का सम्मान करते हुए अपने नियमों पर पुनर्विचार करे और आवश्यक सुधार लाए, ताकि समाज में जाति आधारित वैमनस्यता न फैले. करण भूषण सिंह ने दो टूक कहा कि शिक्षण संस्थानों को जातिगत युद्ध का केंद्र नहीं बनने दिया जा सकता. उनका कहना है कि शिक्षा का उद्देश्य समाज को जोड़ना है, न कि विभाजन पैदा करना. उन्होंने जोर देकर कहा कि वे सभी को साथ लेकर चलने में विश्वास रखते हैं.

इससे पहले करण भूषण सिंह के भाई और यूपी से बीजेपी विधायक प्रतीक भूषण सिंह ने भी नए यूजीसी नियम पर सवाल उठाते हुए कहा, 'इतिहास के दोहरे मापदंडों पर अब गहन विवेचना होनी चाहिए जहां बाहरी आक्रांताओं और उपनिवेशी ताकतों के भीषण अत्याचारों को ह्यअतीत की बातह्ल कहकर भुला दिया जाता है, जबकि भारतीय समाज के एक वर्ग को निरंतर ह्यऐतिहासिक अपराधीह्ल के रूप में चिन्हित कर वर्तमान में प्रतिशोध का निशाना बनाया जा रहा है.'

अदालत की चौखट पर सियासी संग्राम

@ प्रमोद तिवारी

कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष और सांसद राहुल गांधी की नागरिकता पर अदालती सुनवाई की खबर ने देश में सियासी पारा चढ़ा दिया है। कांग्रेस, जिसका अस्तित्व हमेशा से गांधी परिवार के इर्द-गिर्द केंद्रित रहा है, इस मुद्दे पर आक्रामक रुख अपनाए हुए है। पार्टी की पूरी राजनीति इसी धुरी पर टिकी है, यही वजह है कि कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने तत्काल प्रतिक्रिया देते हुए भाजपा सरकार पर न्यायपालिका के दुरुपयोग और लोकतंत्र को कमजोर करने का आरोप लगाया। प्रियंका गांधी वाड्रा ने भी कड़ा रुख अख्तियार करते हुए कहा कि सच सबके सामने आएगा और सरकार का यह 'गोपनीयता कार्ड' महज एक राजनीतिक हथियार है।

दूसरी ओर, भाजपा ने इन आरोपों पर जोरदार पलटवार किया है। पार्टी प्रवक्ता संबित पात्रा ने स्पष्ट कहा कि कानून सबके लिए समान है; यदि राहुल गांधी के दस्तावेज वैध हैं तो उन्हें डरने की जरूरत नहीं है। उन्होंने राष्ट्रीय हित में गोपनीयता को अनिवार्य बताया। इस बीच, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने भले ही इस विषय पर मौन साधा हो, किंतु उनके नजदीकी खेमे ने इसे विपक्ष की पराजय के रूप में प्रचारित करना शुरू कर दिया है। समाजवादी पार्टी प्रमुख अखिलेश यादव राहुल के समर्थन में उतरे और न्याय मिलने की उम्मीद जताई।

उल्लेखनीय है कि यह विवाद वर्ष 2017 में तब उपजा जब एक आरटीआई के जरिए एक ब्रिटिश कंपनी में राहुल गांधी के नाम और नागरिकता का उल्लेख मिला। केंद्र सरकार का दावा है कि उन्होंने ब्रिटिश नागरिकता हेतु आवेदन किया था, जिसे राहुल ने सिरे से खारिज किया है। इस मसले पर पूर्व में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी भी आई थी, पर अब यह उच्च न्यायालय में लंबित है। कानूनी जानकारों का मानना है कि इस मुकदमे का अंतिम फैसला आगामी चुनावी समीकरणों को पूरी तरह बदल सकता है।

कानूनी जानकारों ने चैंबर सुनवाई को उचित ठहराया। पूर्व न्यायाधीशों ने कहा कि गोपनीय दस्तावेजों में ऐसा ही होता है। लेकिन कुछ वकीलों ने सवाल उठाए। उनका कहना है कि लोकतांत्रिक देश में पारदर्शिता जरूरी है। यदि दस्तावेज गोपनीय हैं तो मामला क्यों चल रहा है। वरिष्ठ अधिवक्ता प्रशांत भूषण ने टिप्पणी की कि यह केंद्र की चाल है। छह अप्रैल को अगली सुनवाई होगी। तब शायद दस्तावेज खुले। यदि केंद्र का दावा सही पाया

गया तो राहुल को बड़ा झटका लगेगा, अन्यथा विपक्ष मजबूत होगा। यह मामला लोकसभा चुनावों से ठीक पहले है, इसलिए राजनीतिक महत्व बढ़ गया है। राहुल गांधी ने कहा कि वे अदालत के फैसले का स्वागत करेंगे। केंद्र भी यही दोहरा रहा है, लेकिन तनाव बरकरार है।सुनवाई के दौरान किसी प्रकार का व्यवधान न खड़ा हो, इसके लिए लखनऊ कोर्ट परिसर में बृहस्पतिवार को सुरक्षा कड़ी थी। कांग्रेस कार्यकर्ता इकट्ठा हुए। पुलिस ने बैरिकेडिंग की। मीडिया कवरेज पूरे दिन चला। सोशल मीडिया पर हैशटैग ट्रेंड करने लगे। यह घटना उत्तर प्रदेश की राजनीति को नई दिशा दे सकती है।इस दौरान इलाहाबाद हाईकोर्ट की लखनऊ पीठ में एक बड़ा कानूनी ड्रामा देखने को मिला। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता राहुल गांधी के नागरिकता विवाद मामले की सुनवाई हुई। यह मामला राजनीतिक हलकों में चर्चा का विषय बना हुआ है। केंद्र सरकार की ओर से पेश वकील ने गोपनीयता का हवाला देकर सुनवाई बंद कमरे में कराने की मांग की। न्यायालय ने इसे मान लिया। अगली सुनवाई छह अप्रैल को तय हुई। इस घटना ने विपक्ष और सत्ताधारी दल के बीच नई बहस छेड़ दी है।

राहुल गांधी की नागरिकता को लेकर विवाद पुराना है। कुछ वर्ष पहले यह सवाल उठा था कि क्या वे भारतीय नागरिक हैं या ब्रिटिश। केंद्र सरकार ने दावा किया था कि राहुल गांधी के दस्तावेजों में कुछ अस्पष्टता है। विपक्ष ने इसे राजनीतिक साजिश करार दिया। राहुल गांधी ने कई बार स्पष्ट किया कि वे जन्म से भारतीय हैं। उनके पिता राजीव गांधी और दादी इंदिरा गांधी दोनों भारत के पूर्व प्रधानमंत्री रहे। फिर भी, यह मुद्दा अदालत तक पहुंच गया।लखनऊ पीठ में सुनवाई के लिए काफी संख्या में वकील और पत्रकार इकट्ठा हुए। कोर्ट रूम में तनाव का माहौल था। राहुल गांधी की ओर से पेश वकीलों ने भी अपनी दलीलें तैयार की थीं, लेकिन सुनवाई शुरू होते ही केंद्र सरकार के वकील ने बड़ा कदम उठाया। सुनवाई की शुरूआत होते ही केंद्र सरकार की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता एसबी पाण्डेय ने न्यायालय से विशेष अनुरोध किया। उन्होंने कहा कि गृह मंत्रालय से लाए गए दस्तावेज अत्यंत गोपनीय हैं। इनमें राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ी जानकारियां हो सकती हैं। यदि इन्हें खुले कोर्ट में पेश किया गया तो देशहित प्रभावित हो सकता है। पाण्डेय ने तर्क दिया कि इस तरह के मामलों में चैंबर सुनवाई सामान्य प्रक्रिया है।

न्यायमूर्ति राजीव सिंह की एकल पीठ इस अनुरोध पर विचार करने लगी। उन्होंने दोनों पक्षों से संक्षिप्त बहस सुनी। राहुल गांधी के वकीलों ने इसका विरोध किया। उनका कहना था कि यह मामला सार्वजनिक महत्व का है। गोपनीयता का दावा झूठा है। लेकिन न्यायालय ने केंद्र के अनुरोध को स्वीकार कर लिया। कोर्ट रूम से सभी को बाहर जाने को कहा गया। सुनवाई चैंबर में चली गई। बाहर इंतजार कर रहे पत्रकारों और समर्थकों में निराशा छा गई। चैंबर सुनवाई के दौरान क्या चर्चा हुई, यह गोपनीय है। लेकिन सूत्रों के अनुसार, केंद्र सरकार ने कुछ महत्वपूर्ण दस्तावेज पेश किए। इनमें राहुल गांधी के जन्म प्रमाण पत्र, पासपोर्ट रिकॉर्ड और ब्रिटिश नागरिकता संबंधी पुराने फॉर्म शामिल बताए जाते हैं। राहुल पक्ष ने इनकी प्रामाणिकता पर सवाल उठाए। न्यायमूर्ति राजीव सिंह ने दस्तावेजों का अवलोकन किया। उन्होंने दोनों पक्षों को अगली तारीख तक जवाबी हलफनामा दाखिल करने का निर्देश दिया।यह सुनवाई मात्र आधे घंटे चली। उसके बाद कोर्ट ने 6 अप्रैल की नई तारीख मुकर्रर की। न्यायालय ने स्पष्ट कहा कि तब तक कोई टिप्पणी सार्वजनिक न की जाए। इस फैसले से मामला और रहस्यमय हो गया। विपक्षी नेता इसे न्यायिक साजिश बता रहे हैं। कुल मिलाकर राहुल गांधी का नागरिकता मामला अब चरम पर है। चैंबर सुनवाई ने रहस्य बढ़ा दिया। छह अप्रैल का इंतजार सबको है। यह केवल कानूनी लड़ाई नहीं, बल्कि राजनीतिक युद्ध है। देश देख रहा है कि सच्चाई क्या निकलती है। न्याय की जीत होनी चाहिए।

नीतीश कुमार की बिहारी चाल के सियासी निहितार्थ

@ कमलेश पांडेय

बिहार के मुख्यमंत्री और जनता दल यूनाइटेड सुप्रीमो नीतीश कुमार राजनीति के मंजे हुए खिलाड़ी हैं। सियासत के चाणक्य श्री कुमार ने भाजपा के दबाव में नहीं, बल्कि अपनी केंद्रीय राजनीतिक संभावनाओं को उभारने के लिए दिल्ली कूच करने का अप्रत्याशित फैसला लिया है। भले ही उन्होंने राज्यसभा जाने का निर्णय बिहार की राजनीति में अपेक्षित एक बड़े बदलाव के हिस्से के रूप में लिया है, लेकिन यह भी उनकी लंबे समय से चली आ रही एक अधूरी इच्छा को प्रकट/पूरा करता है।

राजनीतिक विश्लेषकों के मुताबिक, भाजपा के ओबीसीकरण के दृष्टिगत राष्ट्रीय स्तर पर सवर्णों की भाजपा नीत एनडीए से बेरुखी से उपजी सियासी परिस्थितियों का लाभ उठाने के लिए ही उन्होंने यह नया कदम उठाया है, जिसे एक तीर से कई निशाने के तौर पर देखा जाने लगा है। देश की समाजवादी राजनीति में भी अब उनका कोई निकट प्रतिद्वंद्वी नहीं बचा है। इसलिए गुरुवार, 5 मार्च 2026 को राज्यसभा की सदस्यता हेतु नामांकन दाखिल करने के साथ ही उनका अब नया भविष्य भी जुड़ा है।

समझा जाता है कि नीतीश कुमार की

राज्यसभा सदस्यता की पुरानी 'अधूरी हसरत' अब पूरी हो रही है, क्योंकि वे विधानसभा, विधान परिषद और लोकसभा तो रह चुके हैं, लेकिन राज्यसभा नहीं। वहीं, राज्यसभा सदस्य बनने के बाद राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, एक्सीडेंटल प्रधानमंत्री, उपप्रधामंत्री, उपसभापति, कद्दावर केंद्रीय मंत्री बनने की उनकी नई सम्भावनाएं बनेंगी। वहीं राष्ट्रीय राजनीति में अपनी भूमिका बढ़ाने के लिए भी उनका यह कदम देखा जा रहा है, जहां वे बिहार, सामाजिक न्याय और विकास मुद्दों पर प्रभाव डाल सकें।

राजनीतिक विश्लेषक भी मानते हैं कि भाजपा की सलाह पर यह निर्णय लिया गया लगता है, क्योंकि 2025 विधानसभा चुनाव में एनडीए की जीत के बाद बीजेपी सबसे बड़ी पार्टी (89 सीटें) बन गई है। इससे बिहार में भाजपा का मुख्यमंत्री बनना आसान हो सकता है, जबकि नीतीश के बेटे निशांत को डिप्टी सीएम बनाए जाने की चर्चा है। हालांकि, जदयू में उनके इस फैसले पर असंतोष है, लेकिन इसे उनका व्यक्तिगत निर्णय बताया जा रहा है।

वहीं विपक्ष इसे बीजेपी का 'मास्क' हटाने का प्रयास मान रहा है। इससे राजद को पुनः सियासी ऑक्सीजन मिल सकता है। यूँ तो नीतीश कुमार के राज्यसभा जाने के बाद बिहार के नए मुख्यमंत्री की घोषणा अभी स्पष्ट रूप से नहीं हुई है, क्योंकि यह प्रक्रिया राज्यसभा चुनाव के परिणाम (16 मार्च 2026) के बाद शुरू होगी। एनडीए में बीजेपी का सबसे बड़ा दावा माना जा रहा है, क्योंकि उनके पास 89 विधायक हैं।हालांकि, संभावित उम्मीदवार के तौर पर सम्राट चौधरीः वर्तमान डिप्टी सीएम और भाजपा विधायक दल नेता, जिनकी दावेदारी सबसे मजबूत है। उनके पास गृह मंत्रालय जैसे महत्वपूर्ण विभाग हैं और राजनीतिक अनुभव समृद्ध है। वहीं, विजय कुमार सिन्हाः उपमुख्यमंत्री व पूर्व विधानसभा अध्यक्ष, आक्रामक शैली के लिए जाने जाते हैं, लेकिन सम्राट से थोड़ा पीछे हैं। वहीं नित्यानंद रायः केंद्रीय मंत्री, इखढ से प्रमुख नाम हैं, लेकिन नया चेहरा भी संभव है। अन्य चचाएंओं में नीतीश के बेटे निशांत कुमार को डिप्टी सीएम बनाए जाने की संभावना है, क्योंकि उनका कोई स्वतंत्र चुनावी आधार नहीं है।

जदयू नेता विजय चौधरी ने पुष्टि की कि भाजपा से ही मुख्यमंत्री बनेगा। यह बदलाव एनडीए की आंतरिक रणनीति का हिस्सा लगता है। इससे भी पश्चिम बंगाल विधानसभा चुनाव प्रभावित होगा। वहीं, निशांत कुमार को डिप्टी सीएम बनाने का विचार मुख्य रूप से नीतीश कुमार की राजनीतिक विरासत को सुरक्षित रखने के लिए उठाया जा रहा है। वे लो-प्रोफाइल जीवन जीते रहे हैं, लेकिन पिता के राज्यसभा जाने के बाद जदयू में उनकी एंट्री तय मानी जा रही है।

जहां तक राजनीतिक रणनीति की बात है तो नीतीश के राष्ट्रीय स्तर पर जाने से बिहार में भाजपा को मुख्यमंत्री पद मिलेगा, जबकि निशांत को डिप्टी सीएम बनाकर जदयू का प्रभाव कायम रहेगा। हालांकि एनडीए की बैठक में इस पर मुहर लगने की चर्चा है, जो सत्ता समीकरण को संतुलित करेगी।

वहीं निशांत अब तक सियासत से दूर रहे, लेकिन उनकी नियुक्ति पिता की लंबी राजनीतिक यात्रा को आगे बढ़ाने का प्रयास है। यह कदम जदयू कार्यकताओं को एक नया चेहरा देकर पार्टी को मजबूत करने के उद्देश्य से है। इसके अलावा मोदी के हनुमान लोजपा कोटे से केंद्रीय मंत्री चिराग पासवान की सियासत को चमकाने के लिए भी यह नया फेरबदल संभावित प्रतीत होता है।

पंजाब-हिमाचल के बीच उभरती पुरानी दरारें

@ अजेश कुमार

हिमाचल प्रदेश और पंजाब के रिश्तों को अक्सर 'बड़े और छोटे भाई' की संज्ञा दी जाती रही है। यह केवल एक भावनात्मक उपमा नहीं, बल्कि साझा इतिहास, सांस्कृतिक जुड़ाव, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक संपर्कों की उस विरासत का प्रतीक है, जिसने दशकों तक इन दोनों राज्यों के संबंधों को सहज और संतुलित बनाए रखा, लेकिन हालिया घटनाक्रम यह संकेत दे रहे हैं कि इस आत्मीयता के पीछे कई ऐसे अनसुलझे प्रश्न छिपे हुए हैं, जो समय-समय पर सतह पर आकर रिश्तों में तनाव पैदा करते हैं।

इस बार विवाद की शुरूआत भले ही टोल शुल्क में वृद्धि से हुई हो, लेकिन इसका दायरा केवल राजस्व या प्रशासनिक निर्णय तक सीमित नहीं है। यह उन गहरे राजनीतिक, आर्थिक और ऐतिहासिक मतभेदों का प्रतिबिंब है, जो वर्षों से सुलग रहे हैं। हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा एक अप्रैल 2026 से अन्य राज्यों में पंजीकृत वाहनों पर प्रवेश शुल्क में भारी बढ़ोतरी का निर्णय इस विवाद का तात्कालिक कारण बना। नई नीति के तहत निजी वाहनों से लेकर भारी व्यावसायिक ट्रकों तक, सभी श्रेणियों में शुल्क में उल्लेखनीय वृद्धि की गई है, जबकि राज्य के भीतर पंजीकृत वाहनों को पूरी तरह छूट दी गई है। सरकार का तर्क है कि यह निर्णय पर्यटन के बढ़ते दबाव और सीमित संसाधनों वाले पहाड़ी राज्य की बुनियादी संरचना को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक है। साथ ही, केंद्र से मिलने वाले राजस्व घाटा अनुदान में कमी ने राज्य की वित्तीय स्थिति को कमजोर किया है, जिसके चलते नए संसाधनों की तलाश अनिवार्य हो गई है।

हिमाचल जैसे राज्यों के सामने यह एक सामान्य चुनौती है कि वे विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन कैसे बनाए रखें। पर्यटन जहां आय का बड़ा स्रोत है, वहीं यह स्थानीय संसाधनों पर दबाव भी बढ़ाता है। ऐसे में प्रवेश शुल्क जैसी नीतियां एक प्रकार से 'डिमांड मैनेजमेंट' का काम करती हैं, हालांकि, सवाल यह उठता है कि क्या इस तरह का भेदभावपूर्ण शुल्क संघीय ढांचे की भावना

के अनुरूप है? यही वह बिंदु है जहां से पंजाब की आपत्ति शुरू होती है।

पंजाब सरकार ने इस फैसले पर तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है और जवाबी कार्रवाई की चेतावनी भी दी है। राज्य के वित्तमंत्री ने 'एक राष्ट्र, एक कर' की अवधारणा का हवाला देते हुए इसे असंवैधानिक बताया और संकेत दिया कि पंजाब भी हिमाचल के वाहनों पर समान शुल्क लगाने पर विचार कर सकता है। यह प्रतिक्रिया केवल आर्थिक नहीं, बल्कि राजनीतिक भी है। पंजाब से बड़ी संख्या में पर्यटक हिमाचल जाते हैं, और इस निर्णय का सीधा असर वहां के नागरिकों पर पड़ेगा। ऐसे में, राज्य सरकार पर यह दबाव स्वाभाविक है कि वह अपने नागरिकों के हितों की रक्षा के लिए कड़ा रुख अपनाए।लेकिन इसके साथ ही यह भी सच है कि भारत का संघीय ढांचा राज्यों को कुछ हद तक कर लगाने और राजस्व जुटाने की स्वतंत्रता देता है। प्रवेश कर या टोल जैसे प्रावधान पूरी तरह नए नहीं हैं, हालांकि जीएसटी लागू होने के बाद इस तरह के शुल्कों को लेकर संवेदनशीलता बढ़ी है।

टोल शुल्क का यह विवाद दरअसल उन कई लंबित मुद्दों को फिर से सामने ले आया है, जो वर्षों से दोनों राज्यों के बीच तनाव का कारण बने हुए हैं। पहला, शानन जलविद्युत परियोजना विवाद। दरअसल, मंडी जिले में स्थित यह परियोजना लगभग एक सदी पुरानी है और इसकी लीज अवधि 2024 में समाप्त हो चुकी है। हिमाचल का दावा है कि चूंकि भूमि और जल स्रोत उसके हैं, इसलिए परियोजना का स्वामित्व उसे मिलना चाहिए। दूसरी ओर, पंजाब का तर्क है कि पुनर्गठन अधिनियम और केंद्र की अधिसूचनाओं के आधार पर यह परियोजना उसके अधिकार में है। मामला फिलहाल न्यायालय में लंबित है और केंद्र सरकार ने यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया हुआ है। विशेषज्ञों के अनुसार, यह विवाद केवल संपत्ति के स्वामित्व का नहीं, बल्कि जल संसाधनों और ऊर्जा सुरक्षा से जुड़ा रणनीतिक प्रश्न है। दूसरा, भाखड़ा-ब्यास प्रबंधन बोर्ड विवाद। हिमाचल का दावा है कि उसे अपनी हिस्सेदारी के आधार पर हजारों करोड़ रुपये मिलने चाहिए, जबकि उसने हाल ही में हाइडिल परियोजनाओं पर भूमि राजस्व सेस भी लगा दिया है। पंजाब और अन्य राज्यों ने इसे संघीय ढांचे के खिलाफ बताया है। यह विवाद दर्शाता है कि प्राकृतिक संसाधनों के बंटवारे को लेकर राज्यों के बीच स्पष्ट और स्थायी व्यवस्था का अभाव है। तीसरा, चंडीगढ़ और क्षेत्रीय हिस्सेदारी। चंडीगढ़ में हिमाचल की हिस्सेदारी का मुद्दा भी समय-समय पर उठता रहा है, हालांकि यह अक्सर राजनीतिक बयानबाजी तक सीमित रह जाता है।

इन सभी मुद्दों की एक समान विशेषता है, इनका समाधान टलता रहा है, जिससे असंतोष समय-समय पर नए रूप में सामने आता रहता है। राजनीतिक और आर्थिक विवादों के अलावा कुछ सामाजिक घटनाओं ने भी दोनों राज्यों के संबंधों को प्रभावित किया है। 2025 में धार्मिक प्रतीकों को लेकर हुए विवाद और उसके बाद बसों पर हमले जैसी घटनाओं ने माहौल को और अधिक संवेदनशील बना दिया था, हालांकि सरकारों ने उस समय स्थिति को संभालने की कोशिश की, लेकिन इन घटनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि राजनीतिक विवादों को समय रहते हल नहीं किया गया, तो वे सामाजिक तनाव में भी बदल सकते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार, पर्यटन आधारित राज्यों में सांस्कृतिक संवेदनशीलता बनाए रखना अत्यंत आवश्यक होता है। बाहरी पर्यटकों और स्थानीय समुदायों के बीच संतुलन बिगड़ने पर छोटे मुद्दे भी बड़े विवाद का रूप ले सकते हैं। पंजाब और हिमाचल के संबंधों की जड़ें इतिहास में गहराई तक फैली हुई हैं। हिमाचल का गठन विभिन्न पहाड़ी रियासतों को मिलाकर हुआ और बाद में पंजाब के पुनर्गठन के दौरान कई क्षेत्र इसमें शामिल किए गए। दोनों राज्यों के बीच भौगोलिक निकटता, व्यापारिक संपर्क और सांस्कृतिक समानताएं आज भी मजबूत हैं। हजारों लोग रोजगार, शिक्षा और व्यापार के लिए एक-दूसरे के राज्यों में आते-जाते हैं। यही कारण है कि इन संबंधों में तनाव केवल प्रशासनिक मुद्दा नहीं, बल्कि सामाजिक और मानवीय स्तर पर भी असर डालता है। यह पूरा विवाद भारत के संघीय ढांचे की भी परीक्षा है। एक ओर राज्यों को आर्थिक स्वायत्तता की आवश्यकता है, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय एकता और समानता का सिद्धांत भी महत्वपूर्ण है।

केंद्र सरकार की भूमिका यहां निर्णायक हो सकती है। उसे मध्यस्थता करते हुए ऐसे तंत्र विकसित करने होंगे, जिससे राज्यों के बीच संसाधनों और राजस्व को लेकर विवादों का स्थायी समाधान निकाला जा सके। साथ ही, राज्यों को भी यह समझना होगा कि तात्कालिक राजनीतिक लाभ के लिए उठाए गए कदम दीर्घकालिक संबंधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। इस स्थिति से निकलने का सबसे प्रभावी तरीका संवाद और सहयोग ही हो सकता है। दोनों राज्यों के बीच नियमित संवाद के लिए एक स्थायी मंच बनाया जा सकता है। साथ ही, पर्यटन और संसाधनों के उपयोग के लिए साझा नीति बनाई जा सकती है। कानूनी स्पष्टता के साथ लंबित मामलों का शीघ्र निपटारा सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

सांस्कृतिक संवादः सामाजिक स्तर पर विश्वास बहाली के लिए पहल जरूरी है। विशेषज्ञों के अनुसार, यदि इन उपायों को गंभीरता से लागू किया जाए, तो न केवल वर्तमान विवाद सुलझ सकते हैं, बल्कि भविष्य में ऐसे टकरावों की संभावना भी कम हो सकती है। पंजाब और हिमाचल के बीच मौजूदा तनाव यह दर्शाता है कि मजबूत दिखने वाले रिश्तों के भीतर भी कई अनसुलझे प्रश्न छिपे हो सकते हैं। टोल शुल्क का यह विवाद केवल एक ट्रिगर है, जिसने इन सभी मुद्दों को एक साथ सामने ला दिया है। अंततः यह सवाल नहीं है कि कौन बड़ा भाई है और कौन छोटा। असली प्रश्न यह है कि क्या दोनों राज्य अपने ऐतिहासिक संबंधों की परिपक्वता को बनाए रखते हुए संवाद और सहयोग का रास्ता चुनते हैं, या फिर हर नया निर्णय एक नए विवाद को जन्म देता रहेगा। यदि, समझदारी और दूरदृष्टि से काम लिया गया, तो यह विवाद एक अवसर भी बन सकता है। रिश्तों को नए सिरे से परिभाषित करने और उन्हें अधिक संतुलित तथा टिकाऊ बनाने का। अन्यथा, यह केवल एक और उदाहरण बनकर रह जाएगा कि कैसे छोटी-छोटी नीतिगत असहमतियां बड़े संबंधों में दरार पैदा कर सकती हैं।

आसाम में झामुमो ने बंद किए कांग्रेस के लिए दरवाजे

@ अशोक भाटिया

आखिरकार अंतिम समय में झारखंड मुक्ति मोर्चा ने असम में 21 सीटों पर विधानसभा चुनाव लड़ने का फैसला लिया है। पार्टी ने कांग्रेस से गठबंधन की कोशिश की लेकिन सफलता नहीं मिली। कांग्रेस झामुमो को 7 सीट से अधिक देने को तैयार नहीं हुई। कांग्रेस को पता है कि असम में झामुमो की कोई खास पकड़ नहीं है। इसलिए उसने 7 सीटों से अधिक देना उचित नहीं समझा। दोनों तरफ से बारगेनिंग हुई। लेकिन बात नहीं बनी। यह स्वाभाविक राजनीतिक स्थिति है कि जिस राज्य में जिस पार्टी का दबदबा रहता है वह अपने हिसाब से गठबंधन करती है और सहयोगी दलों को सीट देती है।

असम विधानसभा चुनाव को लेकर झारखंड मुक्ति मोर्चा के निर्णय पर प्रतिक्रिया देते हुए कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष केशव महतो कमलेश ने कहा है कि इस निर्णय से राज्य में आदिवासी मतों का बिखराव होगा। झामुमो ने सोमवार को 126 सदस्यों वाली असम विधानसभा के लिए 21 उम्मीदवारों की घोषणा की है केशव महतो कमलेश ने कहा कि कांग्रेस पार्टी ने असम विधानसभा चुनाव में झामुमो के साथ गठबंधन को लेकर गंभीर एवं सकारात्मक पहल की थी। झामुमो को पांच से सात सीटों का प्रस्ताव भी दिया गया था।

यह भी आश्वासन दिया गया था कि जिन सीटों पर झामुमो चुनाव लड़ेगा, वहां वहां कांग्रेस का पूरा संगठनात्मक समर्थन रहेगा। कांग्रेस की मंशा स्पष्ट रूप से यह थी कि झामुमो के प्रतिनिधि असम विधानसभा में पहुंचे। लेकिन, झामुमो ने स्थानीय दलों के सहयोग को लेकर 21 सीटों पर चुनाव लड़ने का फैसला किया है। कमलेश ने कहा कि कांग्रेस पार्टी असम में झामुमो के चुनावी नतीजे के बारे में कोई अंदाजा नहीं लगाना चाहती, लेकिन हमें

चिंता है कि झामुमो को यह फैसला आदिवासी वोटों को बांट सकता है।

ऐसे में पार्टी ने अब अकेले चुनाव मैदान में उतरने का फैसला लिया है। झामुमो के केंद्रीय महासचिव विनोद कुमार पांडेय ने इसकी पुष्टि करते हुए बताया कि पार्टी 19 सीटों पर उम्मीदवार उतारेगी, जबकि एक सीट भाकपा माले के लिए छोड़ी गई है। नामांकन की अंतिम तिथि कल ही होने के कारण पार्टी ने तेजी से रणनीति को अंतिम रूप दे दिया है।

काफी समय से कयास लगाए जा रहे थे कि विपक्षी दल एक मजबूत गठबंधन के साथ बीजेपी के सामने खड़े होंगे। इसी सिलसिले में रांची से लेकर दिल्ली तक बैठकों का कई दौर चला। खुद असम कांग्रेस के प्रभारी भंवर जितेंद्र सिंह और गौरव गोगोई ने हेमंत सोरेन से मुलाकात की थी। बात यहीं नहीं रुकी, सोरेन खुद दिल्ली जाकर कांग्रेस आलाकमान से भी मिले, लेकिन हफ्तों की माथापच्ची के बाद भी सीटों के गणित पर कोई ठोस सहमति नहीं बन सकी। अंततः, झामुमो ने हार मानकर अपने 19 उम्मीदवारों की सूची फाइनल कर दी है और उन्हें पार्टी का पारंपरिक चुनाव चिन्ह 'तीर-कमान' भी सौंप दिया गया है।

झामुमो की इस अकेले चलने की जिद के पीछे एक सोची-समझी चुनावी रणनीति छिपी है। पार्टी का मुख्य ध्यान असम के उन इलाकों पर है जहां चाय बागानों में काम करने वाले लोग और आदिवासी समुदाय बड़ी संख्या में रहते हैं। इन समुदायों के साथ पार्टी का पुराना जड़ाव रहा है और उसे उम्मीद है कि यह वोट बैंक उसे जीत दिलाने में मदद करेगा। माजबत विधानसभा सीट से प्रीति रेखा बरला और सोनारी से बलदेव तेली जैसे चेहरों को उतारकर झामुमो ने यह साफ कर दिया है कि वह पूरी तैयारी के साथ मैदान में है। हालांकि, उसने विपक्षी एकजुटता का एक छोटा संदेश देते हुए बिहाली की सीट वामदलों (सीपीआईएमएल) के लिए छोड़ दी है।

असम की इस टूट का असर केवल वहीं तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि इसकी तपिश झारखंड की राजनीति में भी महसूस की जाएगी। जानकारों का मानना है कि इस घटनाक्रम से दोनों दलों के बीच तल्खी बढ़ सकती है, जिसका असर आगामी राज्यसभा चुनावों पर पड़ेगा। झारखंड में जल्द ही राज्यसभा की दो सीटों के लिए चुनाव होने हैं। अभी तक माना जा रहा था कि एक सीट कांग्रेस के खाते में जा सकती है, लेकिन अब राजनीतिक गलियारों में चर्चा है कि झामुमो दोनों ही सीटों पर अपना दावा ठोक सकती है। लेकिन अंतिम दोनों में भाजपा क्या खेल करती

झामुमो ने स्थानीय दलों के सहयोग को लेकर 21 सीटों पर चुनाव लड़ने का फैसला किया है। कमलेश ने कहा कि कांग्रेस पार्टी असम में झामुमो के चुनावी नतीजे के बारे में कोई अंदाजा नहीं लगाना चाहती, लेकिन हमें चिंता है कि झामुमो को यह फैसला आदिवासी वोटों को बांट सकता है। ऐसे में पार्टी ने अब अकेले चुनाव मैदान में उतरने का फैसला लिया है। झामुमो के केंद्रीय महासचिव विनोद कुमार पांडेय ने इसकी पुष्टि करते हुए बताया कि पार्टी 19 सीटों पर उम्मीदवार उतारेगी।

है और झामुमो क्या रुख रहता है इस पर बहुत कुछ निर्भर करेगा। इसलिए राज्यसभा का चुनाव झारखंड की राजनीति में टर्निंग पॉइंट हो सकता है।यह देखना दिलचस्प होगा कि झारखंड की सत्ता में साझेदार ये दो दल इस कड़वाहट को रांची की गलियों तक पहुंचने से कैसे रोकते हैं।

असम में 9 अप्रैल को एक ही चरण में मतदान होना है। राज्य की 126 सीटों के लिए हो रहे इस चुनाव में फिलहाल बीजेपी का पलड़ा भारी दिख रहा है, जिसने 2021 के चुनाव में 60 सीटें जीती थीं। अब जब विपक्षी एकता में सेंध लग चुकी है, तो आम मतदाता के मन में सवाल है कि क्या झामुमो अपने दम पर वोट काटकर कांग्रेस को नुकसान पहुंचाएगी या खुद के लिए एक नया आधार खड़ा करेगी। 4 मई को जब चुनावी नतीजे आएंगे, तभी पता चलेगा कि हेमंत सोरेन का यह साहसी फैसला कितना सही साबित हुआ।

अब सवाल उठता है कि असम में झामुमो के चुनाव लड़ने से कांग्रेस के साथ उसके रिश्ते पर क्या असर पड़ेगा? असम में चुनाव लड़ने से किसको फायदा होने वाला है? वोटों के बिखराव का लाभ किसको मिलेगा ? भाजपा, कांग्रेस या खुद झामुमो कोई असर डाल पाएगा। आखिर झामुमो की रणनीति क्या है। किस भूमिका में वहां नजर आएगी। सिर्फ चाय बागान में काम करने वाले झारखंड के आदिवासियों के भरोसे झामुमो को कितना वोट मिलने वाला है। आदिवासी वोटों पर झामुमो की नजर है। चाय बागान में काम करने वाले आदिवासियों को अपनी ओर करने के लिए भाजपा ने कई घोषणाएं की हैं।

आदिवासियों का समर्थन इसके पहले के चुनाव में भाजपा और कांग्रेस को मिलता रहा

है। अब झामुमो ने वहां एंट्री की है। मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन आदिवासियों के नेता के रूप में दूसरे प्रदेशों में भी स्थापित होना चाहते हैं। जहां-जहां आदिवासी हैं वहां उनकी नजर है। इसी उद्देश्य से उन्होंने असम में चुनाव लड़ने का फैसला लिया है। हालांकि झामुमो ने फैसले में बहुत देर कर दी है। गठबंधन की आस में नामांकन के अंतिम दिन चुनाव मैदान में जाने का फैसला लिया है।

इधर, एक सवाल यह भी उठ रहा है कि झामुमो के चुनाव लड़ने से भाजपा को फायदा हो सकता है। वोटों का बिखराव होगा और इसका सीधा लाभ बीजेपी को मिलेगा। यदि इसका लाभ भाजपा को मिला तो कांग्रेस के साथ झामुमो के रिश्ते में दरार पड़ सकती है। कांग्रेस का एक खेमा यह मान रहा है कि हेमंत सोरेन अंदर से भाजपा को लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से ही असम में चुनाव लड़ रहे हैं, क्योंकि वहां उनका कोई आधार नहीं है। सिर्फ चाय बागान में काम करने वाले आदिवासियों के नाम पर चुनाव लड़ने से कोई लाभ होने वाला नहीं है।

झामुमो को कोई सीट मिलने वाली नहीं है। हेमंत सोरेन असम तो चले गए लेकिन पड़ोसी प्रदेश पश्चिम बंगाल जहां आदिवासियों की अच्छी खासी संख्या है वहां चुनाव लड़ने पर चुप क्यों है। इसके पीछे का रहस्य क्या है? असम में ओवैसी की भूमिका क्यों निभाना चाहते हैं। इसके आलावा चुनाव से पहले झामुमो को एक बड़ी राहत मिली है। पार्टी को असम में भी उसका पारंपरिक तीर-धनुष चुनाव चिह्न आवंटित कर दिया गया है। इसके लिए पार्टी ने मुख्य निर्वाचन अधिकारी के समक्ष आवेदन दिया था, जिसे मंजूरी मिल गई।

गौरतलब है कि असम में जेएमएम की पूरी चुनावी रणनीति चाय बागानों में काम करने वाली जनजातियों और उनके व्यापक आदिवासी वोट बैंक पर आधारित है। राज्य भर में लगभग 35 से 40 विधानसभा क्षेत्रों में इन मतदाताओं का प्रभाव निर्णायक माना जाता है। पिछले एक साल से पार्टी इस क्षेत्र में अपनी पकड़ मजबूत करने में सक्रिय रूप से लगी हुई है।जेएमएम के महासचिव विनोद कुमार पांडे लगातार असम में डेरा डाले हुए हैं और जमीनी स्तर पर पार्टी संगठन को संगठित और सक्रिय करने के प्रयास जारी हैं।

मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन असम का दो बार दौरा कर चुके हैं, जिसमें उन्होंने आदिवासी पहचान और सामाजिक कल्याण से जुड़े मुद्दों को प्रमुखता से उठाया। असम दौरे के दौरान सोरेन ने कहा था कि असम में रहने वाले आदिवासी समुदाय देश के चाय उद्योग का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और उनके परिश्रम ने ही चाय उद्योग को पहचान दिलाई है। इसलिए, इन समुदायों को उनके अधिकार और सम्मान दिलाना अत्यंत आवश्यक है।

गौरतलब है कि असम में चाय बागानों में काम करने वाले श्रमिकों की अच्छी खासी संख्या है, जिनमें से अधिकांश आदिवासी हैं जो ब्रिटिश काल के दौरान झारखंड के छोटानागपुर क्षेत्र से पलायन कर आए थे। जेएमएम इस समूह को संगठित करने और उनके वोट बैंक का लाभ उठाने का लक्ष्य रख रही है। टीएमसी से निलंबित विधायक हुमायूं कबीर की पार्टी के साथ ओवैसी के चुनाव लड़ने पर मनोज पांडे ने कहा, 'मुझे लगता है कि ओवैसी ने एक-दो राज्यों में कुछ हद तक सफलता हासिल की है। उन्होंने बीजेपी को मजबूत किया है और धर्मनिरपेक्ष दलों और धर्मनिरपेक्ष ताकतों को कमजोर करने का काम किया है, जिससे उनका मनोबल बढ़ा है। मेरा मानना है कि बंगाल की स्थिति में वे कहीं भी उपयुक्त नहीं होंगे।

राष्ट्रीय हिन्दी पत्रिका

राष्ट्र समाज

आप की आवाज

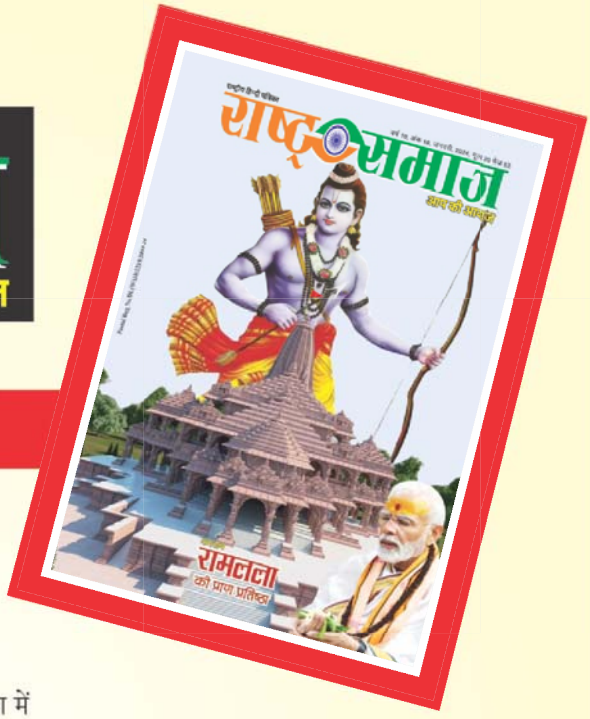

अपने बिजनेस को दें एक नई उड़ान

लगभग एक दशक से भारतीय संस्कृति एवं जीवन मूल्यों के प्रचार-प्रसार में संलग्न राष्ट्रीय समाचार पत्रिका राष्ट्र समाज संपूर्ण रूप से एक पारिवारिक पत्रिका है। इसमें समाचार, विचार व सम सामयिक विषयों पर समीक्षात्मक आलेखों के साथ धर्म, दर्शन व अध्यात्म से जुड़े विषयों का समावेश है। पत्रिका में नियमित रूप से राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक, साहित्य, स्वास्थ्य, पर्यटन, खेल, मनोरंजन व राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय घटनाओं से संबंधित जनोपयोगी व रुचिकर सामग्री प्रकाशित की जाती है। अपने पत्रकारीय दायित्वों को समझते हुए राष्ट्र समाज जहां एक तरह राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश की प्रगति को दशार्ता है, वहीं दूसरी तरफ विकास की दौड़ में पिछड़ चुके शोषित व वंचित समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए अपनी पुरजोर आवाज देश के सामने बुलंद करता है।

यही कारण है कि राष्ट्र समाज पत्रिका समाज के हर वर्ग में समान रूप से लोकप्रिय है। राजधानी दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, हरियाणा, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, ओडिशा व पश्चिम बंगाल समेत उत्तर पूर्व के अन्य राज्यों के लगभग 35 हजार परिवारों तक राष्ट्र समाज की सीधी पहुंच है जिसे तकरीबन एक लाख से भी अधिक सम्मानित पाठक पढ़ते हैं। इतने बड़े पाठक समुदाय के साथ राष्ट्र समाज उचित भुगतान के साथ विज्ञापन व प्रचार-प्रसार के लिहाज से भी एक सशक्त मंच है।

Advertising Rates

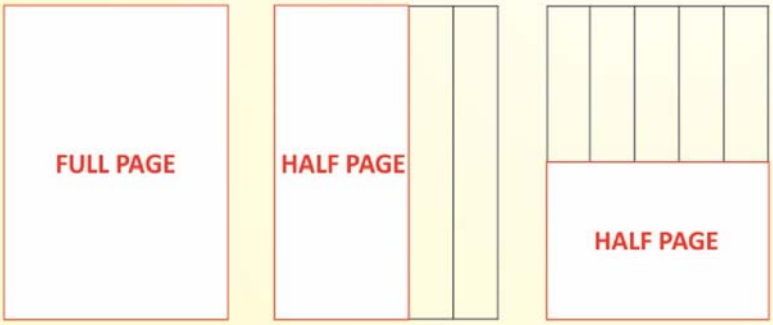

First Inner And Last Inner	:	2,00,000
Page No. 5,7,9,11	:	1,50,000
Inside (Any Page)	:	1,00,000
Half Page	:	50,000
Quater Page	:	30,000
Business Card	:	16,000

BACK PAGE
2, 50,000

BHIM UPI
BHARAT INTERFACE FOR MONEY UNIFIED PAYMENTS INTERFACE

Scan using any BHIM UPI enabled APP

RASTRA SAMAJ

242394555001456@cnrb

केनरा बैंक Canara Bank
सिंडिकेट Syndicate

Canara | BHIM Bhim | Google Pay | Paytm PayTm | Phone Pe

कांशीराम की विरासत पर टिकी सियासी दलों की निगाहें

@ राष्ट्र समाज

उत्तर प्रदेश की राजनीति में कई ऐसे व्यक्तित्व रहे हैं जिनकी थाती समय-समय पर नवीन राजनीतिक विमर्श के साथ प्रकट होती है। बहुजन क्रांति के जनक कांशीराम भी एक ऐसे ही महापुरुष हैं। 15 मार्च को उनकी जयंती अमूमन बसपा ही मनाती आई है, किंतु इस दफा नजारा पूरी तरह भिन्न है। कांग्रेस, समाजवादी पार्टी और भाजपा समेत तमाम दल कांशीराम की वैचारिक विरासत को अपने अनुकूल परिभाषित करने में जुटे हैं। लखनऊ से दिल्ली तक आयोजनों का तांता लगा है, 'बहुजन विमर्श' की चर्चा है और 'पीडीए दिवस' जैसे नवीन सियासी जुमले उछाले जा रहे हैं। यह महज इत्तेफाक नहीं, अपितु 2027 के रण से पहले सामाजिक ध्रुवीकरण को साधने की कवायद है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि कांशीराम का संपूर्ण राजनीतिक दर्शन कांग्रेस विरोध की बुनियाद पर खड़ा हुआ था। 1980 और 90 के दशक में उन्होंने जिस दलित-पिछड़ा गोलबंदी की शुरूआत की, उसी ने कांग्रेस को उत्तर प्रदेश में सत्ता से बाहर कर अप्रासंगिक बना दिया था।

मगर आज वही कांग्रेस उनकी जन्मतिथि को 'परिवर्तन दिवस' के तौर पर आयोजित कर रही है। लखनऊ के इंदिरा गांधी प्रतिष्ठान में राहुल गांधी की सहभागिता और बहुजन संवाद की रूपरेखा इसी व्यापक अभियान का अंग है। कांग्रेस अब यह दलील दे रही है कि कांशीराम को किसी दल विशेष के दायरे में नहीं सिमटना चाहिए, बल्कि उन्हें सामाजिक समरता के वैश्विक नायक के तौर पर स्वीकारना चाहिए। राहुल गांधी इन दिनों सामाजिक न्याय, जातीय गणना और सत्ता में भागीदारी के मसले प्रखरता से उठा रहे हैं। कांशीराम का वह कालजयी नारा– 'जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी'– वर्तमान में कांग्रेस की नई राजनीति का वैचारिक हथियार बन चुका है।

समाजवादी पार्टी की रणनीति भी कम दिलचस्प नहीं है। अखिलेश यादव ने कांशीराम की जयंती को पीडीए यानी पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक दिवस के रूप में मनाने का फैसला किया है। यह सिर्फ प्रतीकात्मक आयोजन नहीं है, बल्कि उस सामाजिक समीकरण को मजबूत करने की कोशिश है जो 2024 के लोकसभा चुनाव में आंशिक रूप से दिखाई दिया था। अखिलेश यादव को यह एहसास है कि सिर्फ यादव-मुस्लिम वोटों के सहारे बीजेपी को चुनौती देना मुश्किल है। इसलिए पीडीए का फार्मूला दरअसल उस बड़े

सामाजिक गठबंधन की तलाश है जिसमें दलित, पिछड़े और अल्पसंख्यक एक साझा राजनीतिक मंच पर आएं। कांशीराम की जयंती को इस रणनीति से जोड़ना इसी सोच का हिस्सा है, क्योंकि बहुजन राजनीति की अवधारणा में यही सामाजिक वर्ग सबसे अहम रहे हैं। बीजेपी भी इस पूरी बहस से अलग नहीं है। पार्टी ने दलित महापुरुषों की जयंती और पुण्यतिथि मनाने के लिए एक कैलेंडर तैयार किया है, जिसमें कांशीराम का नाम भी शामिल है। योगी सरकार के मंत्री असीम अरुण के नेतृत्व में दलित समाज से संवाद बढ़ाने की कोशिशें की जा रही हैं। पिछले कुछ वर्षों में बीजेपी ने दलित समुदाय के बीच अपनी पैठ मजबूत करने के लिए कई प्रतीकात्मक और सामाजिक कार्यक्रम किए हैं। संत रविदास से लेकर बाबा साहेब आंबेडकर तक, दलित प्रतीकों को पार्टी अपने राजनीतिक विमर्श में शामिल कर चुकी है। ऐसे में कांशीराम का नाम भी इस सूची में जुड़ना स्वाभाविक माना जा रहा है।

बीजेपी की रणनीति साफ है दलित समाज को यह संदेश देना कि उसकी राजनीति सिर्फ एक पार्टी की बपौती नहीं है। दरअसल, कांशीराम की विरासत को लेकर अचानक बढ़ी यह दिलचस्पी उत्तर प्रदेश की बदलती राजनीति से जुड़ी है। राज्य में दलित मतदाता लगभग 21 प्रतिशत हैं और अगर अतिपिछड़े वर्ग को जोड़ दिया जाए तो यह संख्या 50 प्रतिशत के करीब पहुंच जाती है। कांशीराम ने इन्हीं वर्गों को राजनीतिक ताकत के रूप में संगठित करने का काम किया था। बसपा के उदय के साथ दलित राजनीति को पहली बार ऐसा मंच मिला जिसने सत्ता तक पहुंचने का रास्ता बनाया। मायावती 4 बार उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं और बहुजन राजनीति का एक नया अध्याय लिखा गया।

लेकिन पिछले कुछ चुनावों में बसपा का जनाधार लगातार कमजोर होता गया है। 2022 के विधानसभा चुनाव और 2024 के लोकसभा चुनाव में पार्टी का प्रदर्शन बेहद सीमित रहा। यही वह राजनीतिक खालीपन है जिसे भरने के लिए दूसरी पार्टियां कोशिश कर रही हैं। सपा को लगता है कि दलित मतदाता अब नए विकल्प की तलाश में हैं और पीडीए फामूर्ले के जरिए उन्हें अपने साथ जोड़ा जा सकता है। कांग्रेस भी इसी संभावना को देख रही है और सामाजिक न्याय की नई बहस के जरिए दलित-ओबीसी वर्गों से संवाद बढ़ाना चाहती है। बीजेपी के सामने चुनौती थोड़ी अलग है। पार्टी ने 2014 के बाद से दलित वोटों में उल्लेखनीय बढ़त हासिल की थी, लेकिन 2024 के चुनाव में कई जगहों पर इस समर्थन में हल्की दरार दिखी। इसलिए बीजेपी भी सामाजिक इंजीनियरिंग के जरिए दलित और अतिपिछड़े वर्गों को अपने साथ बनाए रखने की रणनीति पर काम कर रही है। कांशीराम जैसे प्रतीकों को याद करना उसी व्यापक रणनीति का हिस्सा है। असल सवाल यह है कि क्या कांशीराम की विरासत को सिर्फ राजनीतिक प्रतीक के रूप में इस्तेमाल करना ही काफी होगा? कांशीराम ने जिस बहुजन राजनीति की कल्पना की थी, उसका मूल उद्देश्य सत्ता में भागीदारी और सामाजिक सम्मान था। उन्होंने दलितों और वंचित वर्गों को यह एहसास कराया कि लोकतंत्र में संख्या भी ताकत होती है। उनकी राजनीति सिर्फ चुनाव जीतने की रणनीति नहीं थी, बल्कि सामाजिक चेतना का आंदोलन भी थी।

आज जब अलग-अलग पार्टियां उनकी जयंती मनाने की होड़ में हैं, तब यह भी देखना होगा कि उनकी मूल सोच को कितनी गंभीरता से अपनाया जाता है। क्या यह सिर्फ वोटों की गणित है या सामाजिक न्याय की वास्तविक चिंता भी है? यह सवाल इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि उत्तर प्रदेश की राजनीति में प्रतीकों का इस्तेमाल नया नहीं है। अक्सर नेता और दल किसी बड़े सामाजिक नायक की विरासत को अपने पक्ष में पेश करते रहे हैं। 2027 का विधानसभा चुनाव अभी दूर है, लेकिन उसकी आहट अभी से सुनाई देने लगी है। सपा सत्ता में वापसी का सपना देख रही है, बीजेपी तीसरी बार सरकार बनाने की तैयारी में है और कांग्रेस खोए हुए जनाधार को फिर से हासिल करना चाहती है। ऐसे में कांशीराम की विरासत एक बार फिर राजनीतिक बहस के केंद्र में आ गई है। लेकिन अंतिम फैसला हमेशा मतदाता ही करता है। यह वही मतदाता है जिसे कांशीराम ने कभी कहा था कि सत्ता की चाबी उसके हाथ में है। अब देखना यह है कि 2027 की लड़ाई में यह चाबी किसके ताले को खोलती है और किसकी राजनीति को नया रास्ता दिखाती है।

जदयू में निशांत की धमाकेदार सियासी एंट्री

@ कमलेश पांडेय

बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के अविवाहित इंजीनियर पुत्र निशांत कुमार की धमाकेदार सियासी लॉन्चिंग से बिहार की राजनीति में दूरगामी असर पड़ना लाजिमी है। चूंकि वह अपने प्रगतिशील और यशस्वी पिता की प्रगतिशील समाजवादी सियासत को संभालेंगे, इसलिए कुछ बातें स्पष्ट हैं। वह यह कि अब तीन बड़े स्तरों पर इस पूरे घटनाक्रम का असर पड़ेगाझ सत्ता संतुलन, जेडीयू की आंतरिक राजनीति और राज्य की व्यापक सियासी प्रतिस्पर्धा। इसके अलावा कुछ मौलिक सवाल भी उभरेंगे, जिनकी चर्चा पहले लाजिमी है। स्वाभाविक सवाल है कि क्या जदयू में निशांत कुमार की धमाकेदार सियासी एंट्री के राजनीतिक असर दूरगामी होंगे? हालांकि इसका जवाब गुजशते वक्त की कोख में पल रहा है, जो समय के साथ स्पष्ट होता जाएगा। पहला यह कि उनके पिता नीतीश कुमार अब शारीरिक रूप से अस्वस्थ होकर 'विलासितापूर्ण' सदन राज्यसभा की ओर रुखसत हो चुके हैं, जबकि बिहार के पुनर्निर्माण के उनके सपने अभी भली भांति पूर्वक जवान भी नहीं हो पाए हैं।

इसलिए उन्हें उचित नीतिगत पोषण प्रदान करते हुए जवान करने की जिम्मेदारी अब टीम निशांत कुमार की होगी। कहना न होगा कि पहले 20 साल तक यानी 1985 से 2025 तक नीतीश कुमार ने व्यक्तिगत संघर्ष की राजनीति की और बाद के 20 वर्षों तक यानी 2005 से 2025 उन्होंने सत्ता संघर्ष की राजनीति की। इसी कशमकश में बिहार के पुनर्निर्माण के उनके सपने वैचारिक कुपोषण, प्रशासनिक धूर्तता के शिकार हो गए और पूरी तरह से जवान नहीं हो पाए।

दूसरा यह कि जनता दल यूनाइटेड की सहयोगी पार्टी भाजपा भले ही राष्ट्रीय समाजवादी राजनीति की तरह ही सूबाई समाजवादी राजनीति के प्रतिबिंब जदयू को पीछे धकेलते हुए आगे बढ़ चुकी है, लेकिन पुनः सियासी धोबिया पाट पर राजनीतिक चोट देते हुए जदयू को देश-प्रदेश में पुनः बड़े भाई का दर्जा दिलवाने के सारे दारोमदार अब निशांत कुमार के कंधे पर होंगे। संदेश स्पष्ट है कि बड़े सपने देखेंगे तो उड़ीसा के नवीन पटनायक की तरह सफलतापूर्वक भविष्य में राज करेंगे, अन्यथा चिराग पासवान की तरह बीजेपी के आगे सियासी दुम हिलाते नजर आएंगे। यदि ऐसा हुआ तो यही समझा जाएगा कि बिहार के चाणक्य नीतीश कुमार ने अपनी पुत्र को समुचित राजनीतिक शिक्षा दिए ही उनकी लॉन्चिंग करवा दी। कुछ ऐसे ही सवाल लोगों के जेहन में उठ भी रहे हैं।

तीसरा यह कि जेडीयू और उसके सत्ता समीकरण पर इसका सीधा असर पड़ेगा। क्योंकि नीतीश कुमार के राज्यसभा जाने और संभावित नेतृत्व परिवर्तन के साथ निशांत को डिप्टी सीएम/मुख्य चेहरा बनाने की तैयारी है, जिससे जेडीयू में नेतृत्व का खालीपन भरने की कोशिश होगी। यह कदम बीजेपीझजेडीयू गठबंधन में निरंतरता का संदेश देगा कि नीतीश भले पटना से दिल्ली शिफ्ट हों, पर 'उनका आदमी/ परिवार' सत्ता में रहेगा, जिससे

अचानक अस्थिरता की संभावना घटेगी। लेकिन इसके दूरगामी असर नकारात्मक भी हो सकते हैं।

चौथा यह कि जेडीयू की आंतरिक राजनीति भी इस घटनाक्रम से प्रभावित होगी। ऐसा इसलिए कि जेडीयू के कई एमएलए-एमपी ने खुले तौर पर मांग की कि निशांत ही पार्टी को 'एकजुट रख सकते हैं', जो यह दिखाता है कि नेतृत्व संकट से बचने के लिए संगठन परिवारवाद को स्वीकार कर चुका है। इससे पुराने कद्दावर नेताओं के बीच पद-प्रतिष्ठा को लेकर खींचतान बढ़ सकती है क्योंकि अचानक एक नए, राजनीतिक रूप से अनुभवहीन चेहरे को शीर्ष पर लाना वरिष्ठों की महत्वाकांक्षाओं से टकराएगा।

पांचवां यह कि इस बड़े बदलाव से जदयू के वंशवाद बनाम सुशासन की छवि टकराएगी, क्योंकि नीतीश लंबे समय से वंशवाद के खिलाफ बोलते रहे हैं; और अब बेटे की लॉन्चिंग से उनकी राजनीतिक व वैचारिक साख और ह्लसुशासन बाबू बनाम पारिवारिक राजनीतिह्व वाली नैरेटिव पर विपक्ष को मजबूत हमला करने का मौका मिलेगा। वहीं, आरजेडी-कांग्रेस सहित विपक्ष इसे 'डबल स्टैंडर्ड' कहकर भुनाएगा, जिससे सामाजिक न्याय बनाम परिवारवाद की पुरानी बहस फिर तेज होगी और यादवझगैर लवकुश ओबीसीझअल्पसंख्यक वोटों की समीकरण राजनीति और ज्यादा आक्रामक हो सकती है, जिसकी धार नीतीश कुमार और भाजपा मिलकर कुंद कर चुकी हैं।

छठा यह कि जदयू के इस घटनाक्रम का सूबाई युवा और सामाजिक आधार पर भी संभावित प्रभाव पड़ेगा। अब जदयू पार्टी के भीतर से यह तर्क दिया जा रहा है कि निशांत के आने से युवा वोटर और पढ़ाझलिखा मध्यवर्ग जुड़ सकता है, लेकिन यह तभी होगा जब वे जल्दी जमीनी राजनीति सीखकर स्वतंत्र छवि बना पाएं। अभी के लिए उनका पूरा राजनीतिक वैधता पूंजी 'नीतीश के बेटे' होने से आती है; अगर प्रशासनिक या संगठनात्मक क्षमता जल्दी साबित न हुई तो वे सिर्फ प्रतीकात्मक वारिस बनकर रह सकते हैं, जिससे जेडीयू की गिरती सामाजिक पकड़ नहीं रुक पाएगी।

सातवां यह कि निशांत कुमार की लॉन्चिंग का बिहार की व्यापक सियासत में लंबी अवधि का असर पड़ेगा। निकट भविष्य में यह कदम बीजेपीझजेडीयू सरकार को स्थायित्व देगा, लेकिन मध्यम अवधि में यह तय करेगा कि नीतीश के बाद जेडीयू स्वतंत्र शक्ति बनी रहती है या भाजपा पर और अधिक निर्भर हो जाती है। ऐसा इसलिए कि यदि निशांत कुमार पार्टी के अंदर स्वीकार्यता बना लेते हैं और संगठन पर पकड़ मजबूत कर लेते हैं, तो वे आने वाले चुनावों में जेडीयू को 'पोस्ट-नीतीश' दौर में भी प्रासंगिक रख सकते हैं; वहीं यदि असफल रहे तो बिहार की राजनीति और ज्यादा द्विध्रुवीय (बीजेपी बनाम आरजेडी-कांग्रेस) हो सकती है और जेडीयू हाशिये पर जा सकता है।

आठवां यह कि निशांत की एंट्री ने नीतीश कुमार के सालों पुराने एंटी वंशवाद नैरेटिव को सीधे काट दिया और बिहार में लगभग सभी बड़े नेताओं के परिवारवाद को एक साथ एक्सपोज कर दिया। इससे यह साफ दिखने लगा कि 'वंशवाद विरोध' ज्यादातर नैतिकता नहीं, बल्कि अवसरवादी राजनीति की भाषा थी। इस मुद्दे पर नीतीश का यू टर्न और नैतिकता का संकट खड़ा हो गया है। नीतीश खुद को कपूर्री ठाकुर की परंपरा का मानते रहे, जो बेटे को राजनीति से दूर रख कर वंशवाद के खिलाफ उदाहरण बताए जाते हैं।

नौवां यह कि, कई दशक तक वे लालू प्रसाद, कांग्रेस और अन्य दलों पर परिवारवाद का हमला बोलते रहे; और अब उसी मॉडल पर अपने बेटे निशांत को सीधे उत्तराधिकारी की तरह आगे कर रहे हैं। जिस तरह से राज्यसभा जाने और बेटे के लिए स्पेस बनाने के लिए उन्होंने राजनीतिक पटकथा लिखी है, उससे उनकी समाजवादी राजनीति पर भी सवाल उठना लाजिमी है। बताया जाता है कि विपक्ष (जैसे राजद) ने इसे तुरंत पकड़ लिया कि जिसने हमेशा नेपोटिज्म को कोसा, वही अब 'अपने उत्तराधिकारी को सेट' कर रहा है, यानी नैतिक ऊँचाई ढह गई।

दसवां यह कि बिहार की ओबीसी/दलित 'राजवंशी' राजनीति अब खुलकर सामने आ चुकी है। पहले से ही तेजस्वी यादव, चिराग पासवान, जीतन राम मांझी के बेटे संतोष सुमन, उपेंद्र कुशवाहा के बेटे दीपक आदि खुले तौर पर पिता की विरासत संभाल रहे थे। इसी कड़ी में नीतीश पुत्र निशांत की एंट्री के बाद तस्वीर और साफ हो गई कि लगभग हर प्रमुख सामाजिक राजनीतिक धड़े का नेतृत्व अब 'पॉलिटिकल वंशजों' के हाथ में जा रहा है, यानी पूरा सत्ता-संतुलन परिवारों के इर्द गिर्द घूम रहा है।

ग्यारहवां यह कि प्रशांत किशोर व अन्य आलोचकों ने राजनीतिक पाखंड उजागर किया। प्रशांत किशोर ने सीधे सवाल उठाया कि जो नेता जीवन भर वंशवाद के विरोध का दावा करते रहे, वे आज अपने ही बेटे के लिए जगह बना रहे हैं; यानी 'सिद्धांत' दरअसल सत्ता और परिवार के हिसाब से बदलने वाली चीज है। वहीं, राजद नेताओं ने भी कहा कि नीतीश अब उसी रास्ते पर चल पड़े हैं, जिसको वे लालू परिवार की राजनीति में दोष बताते थे; इससे 'हम अलग हैं' वाला दावा कमजोर हो गया।

बारहवां यह कि युवाओं के मुद्दों बनाम राजनीतिक वंश की कशमकश अब तेज होगी। क्योंकि निशांत की लॉन्चिंग बहस के साथ ही बेरोजगारी, पलायन और सुशासन बनाम परिवारवाद जैसे सवाल फिर उभरे हैंः क्या नई पीढ़ी के लिए नेतृत्व का मतलब सिर्फ नेताओं के बच्चे होंगे या आम कार्यकर्ता/युवा भी ऊपर आएंगे? वहीं जदयू और सहयोगी इसे ह्लनई पीढ़ी का नेतृत्वह्व कह कर बचाने की कोशिश कर रहे हैं, लेकिन यह तर्क भी उसी समय कमजोर पड़ जाता है जब टिकट, पद और कुर्सी लगभग पूरी तरह परिवारों में सिमटते दिखते हैं। स्वाभाविक सवाल है कि क्या जदयू में निशांत कुमार की धमाकेदार सियासी एंट्री के राजनीतिक असर दूरगामी होंगे? हालांकि जवाब वक्त की कोख में पल रहा है, जो समय के साथ स्पष्ट होता जाएगा।

'शादीशुदा पुरुष का लिव-इन में रहना कोई अपराध नहीं

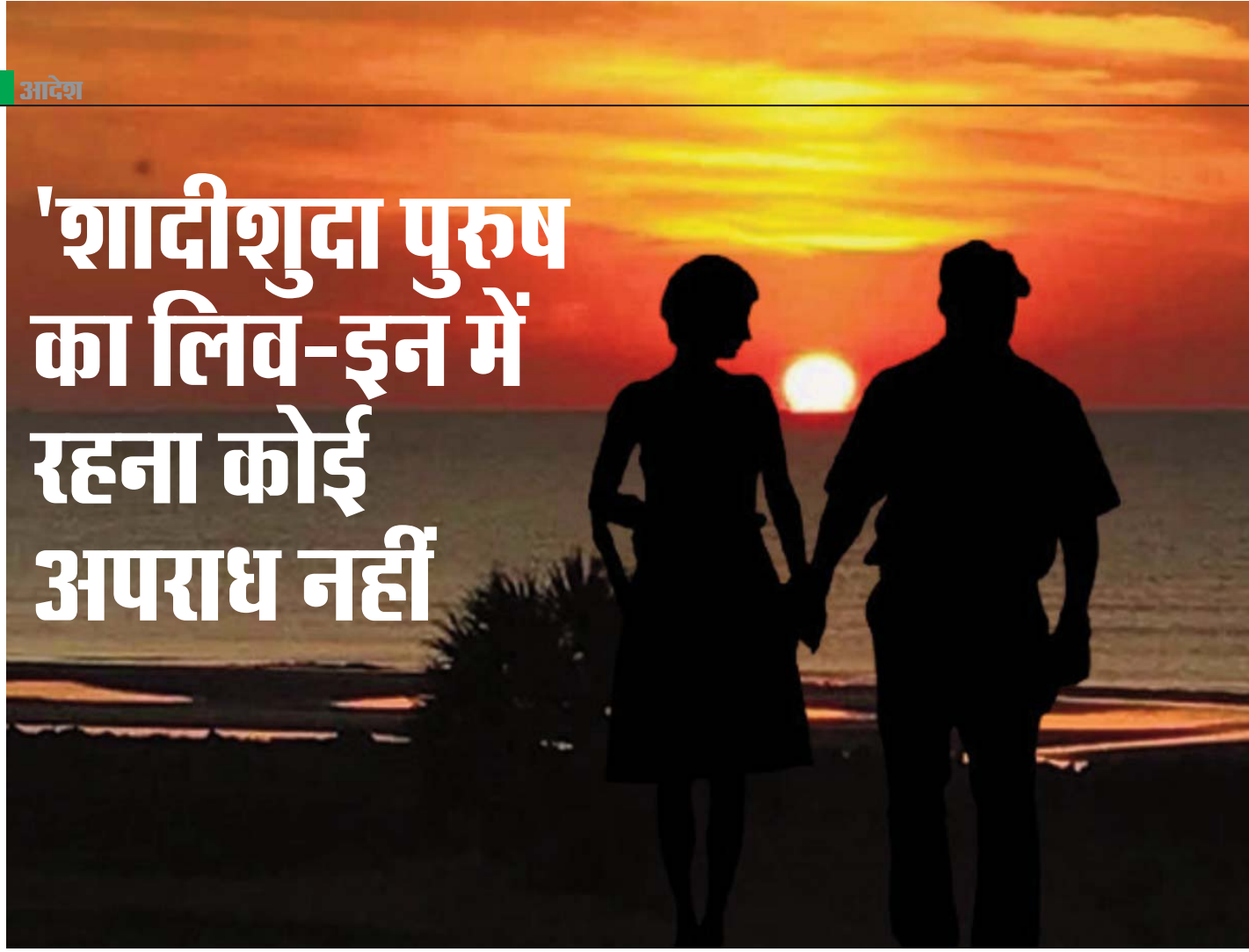

@ राष्ट्र समाज

इलाहाबाद हाईकोर्ट ने लिव इन रिलेशनशिप को लेकर महत्वपूर्ण फैसला सुनाया है। हाईकोर्ट ने कहा है कि एक शादीशुदा पुरुष का लिव-इन रिलेशनशिप में रहना कोई अपराध नहीं है। कोर्ट ने कहा कि सामाजिक नैतिकता नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करने के कोर्ट के कर्तव्य पर हावी नहीं हो सकती।

आपको बता दें कि याचिका दाखिल कर लिव इन में रह रहे शादीशुदा कपल ने लिए सुरक्षा की मांग की थी। इस याचिका में कहा गया था कि कपल को महिला के परिवार से धमकियां मिल रही हैं। महिला के परिवार के वकील ने दलील दी कि चूंकि वह व्यक्ति पहले से ही शादीशुदा है, इसलिए किसी दूसरी महिला के साथ रहना उसके लिए एक अपराध है। हालांकि, कोर्ट ने टिप्पणी की कि कानून को सामाजिक नैतिकता से अलग रखा जाना चाहिए।

हाईकोर्ट के मुताबिक, 'ऐसा कोई अपराध नहीं है जिसके तहत कोई शादीशुदा व्यक्ति, किसी वयस्क के साथ आपसी सहमति से लिव-इन रिलेशनशिप में रह रहा है। ऐसे व्यक्ति को किसी भी तरह के अपराध के लिए अभियोजित किया जा सके। कोर्ट ने कहा कि नैतिकता और कानून को अलग-अलग रखा जाना चाहिए। नैतिकता और कानून को अलग-अलग रखा जाना चाहिए।'

कोर्ट ने कहा कि यदि कानून के तहत कोई अपराध नहीं बनता है, तो नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए कोर्ट की कार्रवाई को सामाजिक राय और नैतिकता निर्देशित नहीं करेगी।

हाईकोर्ट ने कहा कि महिला ने एसएसपी शाहजहांपुर को पहले ही एक एप्लीकेशन दी है, जिसमें कहा गया है कि वह बालिग है और अपनी मर्जी से उस आदमी के साथ लिव-इन रिलेशनशिप में रह रही है। कोर्ट ने यह भी कहा कि उसके माता-पिता और परिवार के दूसरे सदस्य उनके रिश्ते के खिलाफ हैं। उन्होंने उसे जान से मारने की धमकी दी है और दोनों को ऑनर किलिंग का डर है।

कोर्ट ने कहा कि एसएसपी ने इस शिकायत पर कोई कार्रवाई नहीं की है। साथ रहने वाले दो वयस्कों की सुरक्षा करना पुलिस का कर्तव्य है। इस संबंध में पुलिस अधीक्षक पर विशेष दायित्व है। जैसा कि सुप्रीम कोर्ट ने शक्ति वाहिनी बनाम भारत संघ और अन्य, (2018) 7 रउउ 192 मामले में कहा था।

इलाहाबाद हाईकोर्ट ने कहा कि इस याचिका के साथ दोनों याचिकाकताओं का संयुक्त हलफनामा भी लगा है। कोर्ट ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रथम दृष्टया मामला बनता है। हाईकोर्ट ने राज्य सरकार को 8 अप्रैल के लिए नोटिस जारी किया। कोर्ट ने उस जोड़े को अपहरण के एक मामले में भी सुरक्षा प्रदान की, जो महिला के परिवार द्वारा दर्ज कराई गई शिकायत के आधार पर पंजीकृत किया गया था। फिलहाल, हाईकोर्ट के अगले आदेशों तक याचिकाकताओं अनामिका और नेत्रपाल की गिरफ्तारी पर रोक लगाई है। याचियों के खिलाफ शाह जहांपुर के जैतीपुर थाने में केस क्राइम नंबर 4/2026 में एफआईआर दर्ज है। उनपर बीएनएस, 2023 की धारा 87 के तहत एफआईआर दर्ज है।

कोर्ट ने ने महिला के परिवार को इस जोड़े को किसी भी तरह का नुकसान पहुंचाने से रोक दिया। उन्हें उनके घर में प्रवेश करने या उनसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संपर्क करने से भी प्रतिबंधित किया गया है। कोर्ट ने यह भी कहा कि एसएसपी शाहजहांपुर के कपल की सेफ्टी और सिक्योरिटी के लिए पर्सनली ज़िम्मेदार होंगे। बता दें कि याचियों की तरफ से एडवोकेट शहंशाह अख्तर खान ने केस लड़ा। एडिशनल गवर्नमेंट एडवोकेट घन श्याम कुमार स्टेट की तरफ से पेश हुए। वहीं, एडवोकेट अजय कुमार मिश्रा एक प्राइवेट रेस्पोंडेंट की तरफ से पेश हुए, जबकि जस्टिस जे.जे. मुनीर और जस्टिस तरुण सक्सेना की डिवीजन बेंच में सुनवाई हुई।

होर्मुज की लहरों में डूबता सुपर पावर का गुमान

@ राष्ट्र समाज

इतिहास की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि युद्ध के मैदान में जब बंदूकें खामोश होने लगती हैं, तब झूठ के नगाड़े सबसे जोर से बजते हैं। आज फारस की खाड़ी के तपते पानी में जो कुछ घट रहा है, वह किसी हॉलीवुड थ्रिलर से कम नहीं है, लेकिन इस पटकथा का अंत वैसा नहीं है जैसा वॉशिंगटन के व्हाइट हाउस में बैठकर लिखा गया था। युद्ध में कौन जीत रहा है और कौन हार रहा है, इसे आंकने का पैमाना कभी भी मिसाइलों की संख्या या मलबे का ढेर नहीं होता। इसका सबसे सटीक पैमाना यह है कि शांति की भीख सबसे पहले किसने मांगी। आज जब हम अप्रैल 2026 की दहलीज पर खड़े हैं, तो दुनिया देख रही है कि जिस ईरान को प्रतिबंधों की बेड़ियों में जकड़कर घुटनों पर लाने का दावा किया गया था, वह आज तनकर खड़ा है और दुनिया का स्वयंभू थानेदार अब एग्जिट गेट की तलाश में हाथ-पांव मार रहा है।

इस पूरी कहानी को समझने के लिए हमें थोड़ा पीछे मुड़कर साल 2025 के उस 'ऑपरेशन सिंदूर' को देखना होगा, जिसने उपमहाद्वीप के सैन्य इतिहास को हमेशा के लिए बदल दिया। भारत ने जब अपनी सीमा पार कर आतंकवाद के फनों को कुचला, तो वह केवल एक सैन्य कार्रवाई नहीं थी, बल्कि एक संदेश था। वह संदेश यह था कि शक्ति प्रदर्शन चीखने-चिल्लाने से नहीं, बल्कि सटीक प्रहार से होता है। पाकिस्तान का एयर डिफेंस सिस्टम जब ताश के पत्तों की तरह ढह रहा था और भारतीय विमान आकाश में अपनी मर्जी से चित्रकारी कर रहे थे, तब रावलपिंडी के जनरलों ने पहली बार शांति का राग अलापा था। वह हार की तड़प थी जिसे जीत के पदकों के पीछे छिपाने की नाकाम कोशिश की गई। आसिम मुनीर का खुद को 'फील्ड मार्शल' घोषित कर देना वैसा ही था जैसे कोई डूबता हुआ आदमी खुद को समंदर का राजा कह दे। लेकिन गड्ढे झूठ नहीं बोलते। सैटेलाइट की तस्वीरों ने वह सच दुनिया के सामने रख दिया था जिसे पाकिस्तान की पीआर मशीनरी दबाना चाहती थी।

आज मिडिल ईस्ट के रणक्षेत्र में डोनाल्ड ट्रंप वही गलती दोहरा रहे हैं जो कभी पाकिस्तानी जनरलों ने की थी। 28 फरवरी को जब ईरान के शीर्ष नेतृत्व पर हमला हुआ, तो अमेरिका को लगा कि तेहरान ताश की गड्डी की तरह बिखर जाएगा। लेकिन वे भूल गए कि जिस देश ने 40 साल से प्रतिबंधों की आग में खुद को तपाया हो, उसके लिए मिसाइलों की गड़गड़ाहट किसी उत्सव से कम नहीं होती। ईरान ने पलटवार किया और ऐसा किया कि पूरे मध्य पूर्व में फैले अमेरिकी अड्डों की सुरक्षा की कलई खुल गई। आज होर्मुज स्ट्रेट बंद है। दुनिया की रगों में दौड़ने वाला तेल अब ईरान की मर्जी का मोहताज है। वह देश जो कल तक दूसरे देशों को सुरक्षा की गारंटी बेचता था, आज अपने ही सैनिकों की जान बचाने के लिए उन रास्तों को ढूंढ रहा है जो तेहरान तक जाते हों।

ट्रंप का आज का अंदाज बिल्कुल मई 2025 के पाकिस्तान जैसा है। कैमरों के सामने

मिडिल ईस्ट में अमेरिका की विफलता केवल सैन्य नहीं, बल्कि रणनीतिक और नैतिक भी है। जिस रडार और एयर डिफेंस के भरोसे अमेरिका अपनी धौंस जमाता था, वे आज मलबे के ढेर में तब्दील हो चुके हैं। अरब देश, जो कभी अमेरिका की छत्रछाया में खुद को सुरक्षित महसूस करते थे, अब नए समीकरणों की तलाश में हैं। सऊदी अरब का यूक्रेन के साथ डिफेंस डील करना इस बात का सीधा प्रमाण है कि अब दुनिया को ट्रंप के काड्र्स की असलियत समझ आ गई है।

आकर वे अपनी जीत के कसीदे पढ़ रहे हैं, ट्रुथ सोशल पर कैप्स लॉक में अपनी ताकत का बखान कर रहे हैं, लेकिन जमीन की हकीकत उनके दावों का मजाक उड़ा रही है। जब आप हार रहे होते हैं, तो आपकी भाषा में अहंकार और हताशा का एक अजीब मिश्रण घुल जाता है। अमेरिका आज पाकिस्तान के जरिए ईरान को 15 सूत्रीय प्रेम पत्र भेज रहा है, लेकिन तेहरान ने साफ कर दिया है कि वह किसी सेल्समैन से बात नहीं करेगा। ईरान की शर्तें साफ हैं होर्मुज पर उसका नियंत्रण होगा, अमेरिकी फौजें इलाका खाली करेंगी और नुकसान की भरपाई वॉशिंगटन को करनी होगी। ये शर्तें किसी हारे हुए राष्ट्र की नहीं, बल्कि उस खिलाड़ी की हैं जिसने सामने वाले की पूरी बिसात उलट दी है।

मिडिल ईस्ट में अमेरिका की विफलता केवल सैन्य नहीं, बल्कि रणनीतिक और नैतिक भी है। जिस रडार और एयर डिफेंस के भरोसे अमेरिका अपनी धौंस जमाता था, वे आज मलबे के ढेर में तब्दील हो चुके हैं। अरब देश, जो कभी अमेरिका की छत्रछाया में खुद को सुरक्षित महसूस करते थे, अब नए समीकरणों की तलाश में हैं। सऊदी अरब का यूक्रेन के साथ डिफेंस डील करना इस बात का सीधा प्रमाण है कि अब दुनिया को ट्रंप के काड्र्स की असलियत समझ आ गई है। जब घर का मुखिया ही चोरों से अपनी रक्षा न कर पाए, तो परिवार के बाकी सदस्य नए रक्षक ढूंढने लगते

हैं। आज वही स्थिति अमेरिका की है।

सबसे दिलचस्प भूमिका पाकिस्तान की है, जो अपनी फटीहाली को कूटनीतिक अवसर में बदलने की कोशिश कर रहा है। वह देश जिसने खुद अपनी नाक कटवाई थी, आज अमेरिका और ईरान के बीच बिचौलिए की भूमिका में डॉलर बटोरने के सपने देख रहा है। लेकिन ईरान ने स्पष्ट कर दिया है कि वह इस खेल का हिस्सा नहीं बनेगा। ईरान जानता है कि वक्त उसके साथ है। वह चुप है, शांत है और अपने लक्ष्यों के प्रति अडिग है। उसकी यह खामोशी वॉशिंगटन की बेचैनी को और बढ़ा रही है। जब आपके पास खोने के लिए कुछ न बचा हो, तो आप सबसे खतरनाक योद्धा बन जाते हैं। ईरान आज उसी स्थिति में है।

कार्ल मार्क्स ने सच ही कहा था कि इतिहास खुद को दोहराता है, पहले एक त्रासदी के रूप में और फिर एक मजाक के रूप में। ऑपरेशन सिंदूर पाकिस्तान के लिए त्रासदी थी, और आज फारस की खाड़ी में अमेरिका जो कर रहा है, वह एक वैश्विक मजाक बनकर रह गया है। ट्रंप अब एक सुरक्षित रास्ता ढूंढ रहे हैं जिससे वे अपनी साख बचा सकें, लेकिन ईरान उन्हें वह मौका देने के मूड में नहीं है। वह होर्मुज का पूरा टोल वसूलने के बाद ही चैन से बैठेगा। यह युद्ध मिसाइलों से नहीं, बल्कि सब्र और हौसले से जीता जा रहा है। और फिलहाल, जीत का सेहरा तेहरान के सिर बंधता दिख रहा है, जबकि वॉशिंगटन की चमकती वर्दी पर धूल और हार की कालिख साफ देखी जा सकती है। गड्ढे आज भी वहीं हैं, चाहे वो रावलपिंडी के एयरफील्ड पर हों या ट्रंप की विदेश नीति के सीने पर। सच तो यही है कि सुपरपावर का गुमान अब फारस की खाड़ी की लहरों में दफन हो चुका है।

@ राष्ट्र समाज

बुजुर्गों के भरण-पोषण के लिये एक सराहनीय पहल

भारतीय संस्कृति में माता-पिता को देवतुल्य माना गया है-'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव' केवल शास्त्रों की पंक्ति नहीं, बल्कि हमारी सामाजिक संरचना की आत्मा रही है। इसलिए यह किसी भी सभ्य समाज के लिए अत्यंत शर्मनाक स्थिति है कि जन्म देने और पालन-पोषण करने वाले माता-पिता को जीवन की सांझ में उपेक्षा, अपमान और आर्थिक असुरक्षा का सामना करना पड़े, और उन्हें अपने ही बच्चों से गुजारा भत्ता पाने के लिए कानून और प्रशासन का सहारा लेना पड़े। दुर्भाग्य से यह आज के समय की कठोर वास्तविकता बनती जा रही है। बुढ़ापा अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। उम्र बढ़ने के साथ शरीर की क्षमताएं कम होने लगती हैं, बीमारियां बढ़ने लगती हैं और आय के स्रोत लगभग समाप्त हो जाते हैं। सेवानिवृत्ति के समय जो थोड़ी बहुत जमा-पूंजी होती है, वह बच्चों की पढ़ाई, शादी-ब्याह और मकान बनाने में खर्च हो जाती है। सरकारी नौकरी करने वालों को पेंशन मिल भी जाती है, लेकिन निजी क्षेत्र या छोटे व्यवसाय से जुड़े लोगों की स्थिति अधिक कठिन हो जाती है। ऐसे समय में यदि बच्चे ही माता-पिता की देखभाल न करें तो यह केवल पारिवारिक विफलता नहीं, बल्कि सामाजिक अपराध की श्रेणी में आता है।

इन्हीं परिस्थितियों को देखते हुए तेलंगाना विधानसभा द्वारा पारित 'तेलंगाना कर्मचारी जवाबदेही और माता-पिता सहायता निगरानी विधेयक 2026' एक महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक पहल के रूप में सामने आया है। इस विधेयक का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि यदि बच्चे अपने माता-पिता की देखभाल नहीं करते, तो उनके वेतन से एक निश्चित राशि काटकर माता-पिता को दी जाए। यह कानून सरकारी कर्मचारियों के साथ-साथ निजी क्षेत्र के कर्मचारियों, सांसदों, विधायकों और स्थानीय निकायों के जनप्रतिनिधियों पर भी लागू होगा। इस प्रकार यह कानून केवल एक कानूनी प्रावधान नहीं, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारी को कानूनी रूप देने का प्रयास है।

हालांकि भारत में पहले से 'माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों के भरण-पोषण एवं कल्याण अधिनियम 2007' मौजूद है, लेकिन तेलंगाना का यह नया विधेयक अधिक व्यापक, संवेदनात्मक और प्रभावी माना जा रहा है। इसमें प्रावधान है कि यदि बच्चे माता-पिता की देखभाल नहीं करते, तो शिकायत मिलने पर उनके वेतन से पंद्रह प्रतिशत या दस हजार रुपये (जो भी कम हो) काटकर माता-पिता के खाते में जमा किए जाएंगे। शिकायत का निस्तारण

जिला कलेक्टर द्वारा साठ दिनों के भीतर किया जाएगा और इसके लिए वरिष्ठ नागरिक आयोग का गठन भी किया जाएगा। इस कानून का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि इसमें केवल जैविक माता-पिता ही नहीं, बल्कि सौतेले माता-पिता भी शिकायत कर सकते हैं।

यह कानून इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि आज भारतीय परिवार व्यवस्था तेजी से बदल रही है। संयुक्त परिवार टूटकर एकल परिवार में बदल चुके हैं और अब तो एक व्यक्ति परिवार की अवधारणा भी विकसित हो रही है। करियर की दौड़, आर्थिक दबाव, शहरी जीवनशैली, सुविधावाद और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की बढ़ती भावना ने परिवार की पारंपरिक संरचना को कमजोर किया है। कई बार माता-पिता को घर से निकालकर वृद्धाश्रम भेज दिया जाता है, और यदि घर में रख भी लिया जाए तो उन्हें उपेक्षा, तिरस्कार और मानसिक पीड़ा सहनी पड़ती है। उनकी दवाइयों, भोजन और देखभाल तक में लापरवाही बरती जाती है।

ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न उठता है कि क्या माता-पिता की सेवा केवल संस्कारों से सुनिश्चित की जा सकती है या इसके लिए कानून की भी आवश्यकता है? आदर्श स्थिति में तो संस्कार ही पर्याप्त होने चाहिए। भारतीय इतिहास और परंपरा में माता-पिता की सेवा के अनेक प्रेरक उदाहरण मिलते हैं। श्रवण कुमार का उदाहरण तो भारतीय संस्कृति में आदर्श पुत्र का प्रतीक बन चुका है, जिसने अपने अंधे माता-पिता को कंधे पर बैठाकर तीर्थ यात्रा करवाई। इसी प्रकार भगवान श्रीराम ने पिता के वचन को निभाने के लिए राजपाट छोड़कर वनवास स्वीकार किया। यह केवल धार्मिक कथाएं नहीं, बल्कि भारतीय समाज की नैतिक संरचना के आदर्श हैं।

इतिहास में छत्रपति शिवाजी, महात्मा गांधी, स्वामी विवेकानंद जैसे अनेक व्यक्तित्वों के जीवन में भी माता-पिता के प्रति गहरी श्रद्धा और सम्मान देखने को मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि माता-पिता के प्रति सम्मान और सेवा भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा रही है। लेकिन आज जब संस्कार कमजोर हो रहे हैं, तब समाज को कानून का सहारा लेना पड़ रहा है। लेकिन इस पूरे विषय को केवल एकतरफा दृष्टि से देखना भी उचित नहीं होगा। यह भी एक सच्चाई है कि कई बार माता-पिता भी बच्चों के प्रति अत्यधिक अनुशासन, नियंत्रण और अपेक्षाओं का दबाव बनाते हैं।

वे चाहते हैं कि बच्चे हमेशा उनकी इच्छाओं के अनुसार ही जीवन जिएं, अपने निर्णय स्वयं न लें, विवाह, करियर, जीवनशैली हर चीज में माता-पिता की इच्छा सर्वोपरि रहे।

कई बार माता-पिता बच्चों की निजी जिंदगी में अत्यधिक हस्तक्षेप करते हैं, जिससे परिवार में तनाव उत्पन्न होता है। ऐसी परिस्थितियों में बच्चों और माता-पिता के बीच दूरी बढ़ जाती है और पारिवारिक वातावरण तनावपूर्ण हो जाता है।

इसलिए समस्या का समाधान केवल कानून नहीं है, बल्कि परिवार के भीतर संतुलन, संवाद और समझ भी उतनी ही आवश्यक है। बच्चों को यह समझना चाहिए कि माता-पिता ने उनके लिए अपना पूरा जीवन समर्पित किया है, इसलिए बुढ़ापे में उनकी सेवा और सम्मान उनका नैतिक कर्तव्य है। वहीं माता-पिता को भी यह समझना चाहिए कि समय बदल गया है, नई पीढ़ी की जीवनशैली और सोच अलग है, इसलिए उन्हें बच्चों को समझने और उन्हें स्वतंत्रता देने की आवश्यकता है। वास्तव में परिवार एक संस्था है, जो प्रेम, त्याग, सम्मान और संवाद पर चलती है, न कि केवल अधिकार और अनुशासन पर। जहां केवल अधिकार होंगे, वहां टकराव होगा; जहां केवल त्याग होगा, वहां असंतुलन होगा; लेकिन जहां प्रेम और संतुलन होगा, वहां परिवार मजबूत होगा।

तेलंगाना का यह कानून एक महत्वपूर्ण पहल है, लेकिन यह अंतिम समाधान नहीं है। कानून बच्चों को माता-पिता का भरण-पोषण करने के लिए मजबूर कर सकता है, लेकिन वह प्रेम, सम्मान और संवेदना पैदा नहीं कर सकता। इसके लिए समाज में नैतिक शिक्षा, पारिवारिक संस्कार और सामाजिक जागरूकता की आवश्यकता है। स्कूलों में, सामाजिक संस्थाओं में और धार्मिक संगठनों में परिवार और बुजुर्गों के सम्मान की शिक्षा दी जानी चाहिए। आज 'नया भारत' और 'विकसित भारत' की बात की जा रही है, लेकिन केवल आर्थिक विकास ही पर्याप्त नहीं है। यदि समाज में बुजुर्ग असुरक्षित, उपेक्षित और अपमानित होंगे, तो विकास अधूरा रहेगा। वास्तविक विकास वही है जिसमें समाज का हर वर्ग-बच्चे, युवा, महिलाएं और बुजुर्ग सुरक्षित और सम्मानित जीवन जी सकें।

अतः आवश्यक है कि हम तीन स्तरों पर कार्य करें-पहला, सरकार और कानून बुजुर्गों की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करें। दूसरा, समाज में माता-पिता के सम्मान और सेवा के संस्कार विकसित किए जाएं। तीसरा, परिवार के भीतर माता-पिता और बच्चों के बीच संतुलित और संवादपूर्ण संबंध स्थापित किए जाएं। यदि ये तीनों स्तर मजबूत हो जाएं, तो न केवल बुजुर्गों का जीवन सुरक्षित और सम्मानजनक होगा, बल्कि परिवार संस्था भी मजबूत होगी और समाज में मानवीय संवेदनाएं जीवित रहेंगी। निश्चिततौर पर कहा जा सकता है कि माता-पिता केवल परिवार का हिस्सा नहीं होते, वे परिवार की जड़ होते हैं। यदि जड़ कमजोर होगी, तो वृक्ष भी कमजोर होगा। इसलिए बुजुर्गों का सम्मान और सुरक्षा केवल एक पारिवारिक या कानूनी मुद्दा नहीं, बल्कि समाज की नैतिकता और सभ्यता की परीक्षा है। जो समाज अपने बुजुर्गों का सम्मान नहीं करता, वह कभी महान नहीं बन सकता।

नसीब शब्द एक बहुत बड़ा धोखा है

@ राष्ट्र समाज

अक्सर जीवन के किसी मोड़ पर जब उम्मीदें टूटती हैं या मेहनत का फल तुरंत नहीं मिलता, तो हम एक शब्द का सहारा लेते हैं 'नसीब'। लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि जिसे हम अपनी ढाल बनाते हैं, वह असल में हमारे भविष्य के लिए सबसे बड़ा धोखा भी हो सकता है? बीटीडब्ल्यू ग्रुप के चेयरमैन ने इस विचार को प्रमुखता से रेखांकित किया है। उनका मानना है कि 'नसीब के भरोसे बैठना खुद को धोखा देने के समान है।' यह एक निष्क्रिय दृष्टिकोण है, जबकि वास्तविक सफलता के लिए सक्रिय प्रयास और निरंतर कर्म अनिवार्य हैं।

क्यों है नसीब एक 'धोखा'

अवसरों की हत्या: जो व्यक्ति केवल हाथ की लकीरों को निहारता है, वह उन दरवाजों को कभी नहीं खटखटाता जो केवल 'परिश्रम' की दस्तक से खुलते हैं। नसीब का भ्रम हमें उन अवसरों से दूर कर देता है जिन्हें कर्मवीर अपनी मेहनत से हासिल कर लेते हैं।

नियंत्रण खो देना: जब आप कहते हैं कि 'जो भाग्य में होगा, वही मिलेगा,' तो आप अनजाने में अपने जीवन की ड्राइविंग सीट से उतर जाते हैं। नसीब पर निर्भर रहने से आप अपने जीवन की बागडोर अपने हाथों से छोड़ देते हैं।

जिम्मेदारी से पलायन: नियतिवाद और कर्म के बीच अक्सर एक महीन रेखा होती है। बहुत से लोग 'नसीब' के विचार को अपनी जिम्मेदारी से बचने या विफलता को स्वीकार करने का एक तरीका बना लेते हैं। यह दृष्टिकोण व्यक्ति को सुधार करने से रोकता है।

सफलता हाथों की लकीरों में नहीं, बल्कि माथे के पसीने और सही दिशा में किए गए कर्म में छिपी होती है।

आर. के. यादव,
चेयरमैन,बीटीडब्ल्यू ग्रुप

मनोवैज्ञानिक पहलू

जीवन अनिश्चित है और जब परिणाम उम्मीद के मुताबिक नहीं होते, तो हम उसे 'बदकिस्मती' कह देते हैं।

कठिन परिस्थितियों में 'नसीब' को दोष देना मन को अस्थायी सांत्वना तो दे सकता है, लेकिन यह आपको समाधान की ओर नहीं ले जाता। मनोवैज्ञानिक रूप से, इसे 'सबसे बड़ा धोखा' मानना एक चेतावनी है, यह याद दिलाने के लिए कि जीवन की बागडोर खुद के हाथों में लेना ही सबसे अधिक फलदायी होता है।

अंततः, जो लोग मेहनत और कर्म में अटूट विश्वास रखते हैं, वे भाग्य को एक भ्रम मानते हैं। जैसा कि सफल उद्यमी और बीटीडब्ल्यू ग्रुप के चेयरमैन जैसे व्यक्तित्व भी मानते हैं कि मेहनत कभी धोखा नहीं देती, जबकि किस्मत पर निर्भरता आपको भ्रम में रख सकती है।

सेवा और कर्म को ही धर्म मानने वाला व्यक्तित्व

@ विनीत कुमार लोहिया

समाज में कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनका जीवन खुद के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के काम आने के लिए समर्पित होता है। विनीत कुमार लोहिया एक ऐसा ही नाम है, जिन्होंने अपनी जीवनशैली और विचारों से यह सिद्ध किया है कि 'मानव सेवा' से बड़ा कोई दूसरा अनुष्ठान नहीं है।

उनके अनुसार, सेवा वह 'सीमेंट' है जो समाज को स्नेह और आत्मीयता के अटूट बंधन में बांधे रखती है। विनीत कुमार लोहिया का मानना है कि मनुष्य को मानवता में कभी विश्वास नहीं खोना चाहिए। वे अक्सर उदाहरण देते हैं कि मानवता एक विशाल समुद्र के समान है; यदि इस सागर की कुछ बूंदें गंदी भी हो जाएं, तो पूरा समुद्र अपवित्र नहीं होता। इसी सकारात्मकता के साथ वे निरंतर समाज की सेवा में जुटे रहते हैं।

उनके व्यक्तित्व की कुछ झलकियां

सेवा बनाम शत्रुता: श्री लोहिया का अटूट विश्वास है कि सेवा और प्रेम में वह शक्ति है जो शत्रु को भी मित्र बना सकती है। इसके लिए धन की नहीं, बल्कि शुद्ध करुणा की आवश्यकता होती है।

पवित्रता का पैमाना: वे कहते हैं कि मानव मात्र की सेवा करने वाले हाथ उतने ही पवित्र होते हैं, जितने ईश्वर की साधना करने वाले होंठ। उनके लिए सेवा ही वास्तविक साधना है।

पृथ्वी का किराया: विनीत कुमार लोहिया का एक बहुत ही गहरा दर्शन है कि ₹मानव मात्र की सेवा उस किराए के समान है, जो हम इस पृथ्वी पर रहने के बदले में चुकाते हैं।

महानता के लिए डिग्री नहीं, दया चाहिए

अक्सर लोग सोचते हैं कि समाज सेवा के लिए किसी बड़े पद या डिग्री की आवश्यकता होती है, लेकिन विनीत कुमार लोहिया इस धारणा को

खारिज करते हैं। उनका मानना है कि महान होने के लिए केवल एक संवेदनशील हृदय और प्रेम से भरी आत्मा की जरूरत होती है।

जो लोग खुद को अक्षम मानते हैं, उन्हें वे प्रकृति से सीखने की सलाह देते हैं—जहाँ वृक्ष और पशु बिना किसी स्वार्थ के निरंतर सेवा कर रहे हैं। विनीत कुमार लोहिया आज के युवाओं के लिए एक जीवंत मिसाल हैं। उनका जीवन हमें सिखाता है कि सच्ची मानवता वही है जहाँ हम पूरी ईमानदारी के साथ न केवल इंसानों, बल्कि हर जीव के प्रति दया और प्रेम का भाव रखें।

सिमटते वन और सिसकती सांसें

नीम की दातुन से लेकर पीपल की शीतल छांव तक, हमारा पूरा जीवन इन वनों की गोद में बीता है। लेकिन आज की तस्वीर डराने वाली है। हमने विकास की अंधी दौड़ में उन 'कुदरती फेफड़ों' को काट दिया है जो हमें मुफ्त में ऑक्सीजन देते थे। शहर अब धीरे-धीरे 'तंदूर' बनते जा रहे हैं।

@ दिलीप कुमार पाठक

सुबह की पहली किरण के साथ जब खिड़की खुलती है, तो वह ताजी हवा अब महसूस नहीं होती जो कभी बचपन की यादों का हिस्सा थी। कारण साफ है, हमारी खिड़कियों के बाहर अब पेड़ों की कतारें नहीं, बल्कि कंक्रीट की ऊंची और बेजान दीवारें खड़ी हैं। पुराने समय में घर के बड़े-बुजुर्ग कहते थे कि एक पेड़ लगाना सौ यज्ञ करने के बराबर है। तब पेड़ सिर्फ लकड़ी का बेजान ढांचा नहीं, बल्कि परिवार का एक जीता-जाता सदस्य हुआ करते थे।

नीम की दातुन से लेकर पीपल की शीतल छांव तक, हमारा पूरा जीवन इन वनों की गोद में बीता है। लेकिन आज की तस्वीर डराने वाली है। हमने विकास की अंधी दौड़ में उन 'कुदरती फेफड़ों' को काट दिया है जो हमें मुफ्त में ऑक्सीजन देते थे। शहर अब धीरे-धीरे 'तंदूर' बनते जा रहे हैं।

मार्च के महीने में ही मई जैसी तपिश का अहसास होने लगा है। यह प्रकृति की सिसकी है, जिसे हम अपनी सुख-सुविधाओं के शोर में सुन नहीं पा रहे। जब कोई जंगल कटता है, तो केवल पेड़ नहीं गिरते, बल्कि हजारों परिंदों के पुस्तैनी आशियाने भी उजड़ जाते हैं। वह गौरैया जो कभी हमारे आंगन में फुदकती थी, अब कहीं खो गई है क्योंकि उसे घोंसला बनाने के लिए अब डालियां नहीं मिलतीं।

अखबारों में जब हम 'ग्लोबल वार्मिंग' जैसे भारी शब्द पढ़ते हैं, तो लगता है कि यह कोई विदेशी समस्या है। पर सच तो यह है कि यह संकट हमारे अपने दरवाजे पर दस्तक दे रहा है। पहाड़ों पर कम होती बर्फ और मैदानों में बढ़ता पारा इसी का नतीजा है। हमने अपनी विलासिता के लिए नदियों के उद्गम सुखा दिए, क्योंकि वहां के घने जंगल अब रिसॉर्ट और चौड़ी सड़कों में तब्दील हो चुके हैं। हम मंगल ग्रह पर जीवन की संभावनाएं तलाश रहे हैं,

लेकिन जिस धरती ने हमें गोद में खिलाया, उसके हरे आंचल को तार-तार करने में हमने कोई कसर नहीं छोड़ी।

विचित्र विडंबना देखिए, आज हमें शुद्ध हवा के लिए 'ऑक्सीजन पार्लर' जाने की जरूरत पड़ रही है।

जो चीज कुदरत ने हमें उपहार में दी थी, उसे अब हम रुपयों में खरीद रहे हैं। क्या हमने कभी ठंडे दिमाग से सोचा है कि हम अपनी आने वाली पीढ़ी को विरासत में क्या देकर जाएंगे? क्या हमारे बच्चे जंगलों को सिर्फ मोबाइल की स्क्रीन या किताबों के पन्नों पर देखेंगे? क्या वे कभी जान पाएंगे कि मिट्टी की सोंधी खुशबू और पत्तों की सरसराहट का सुकून क्या होता है? 21 मार्च का यह दिन हमसे कोई लंबी गोष्ठियां नहीं मांगता, बल्कि एक छोटा सा मानवीय संकल्प मांगता है।

हमें समझना होगा कि पौधारोपण केवल फोटो खिंचवाने और सोशल मीडिया पर डालने का जरिया नहीं है। एक नन्हा पौधा लगाना बहुत आसान है, लेकिन उसे एक विशाल पेड़ बनाने तक पालना ही असली जिम्मेदारी है। हमारे पूर्वजों ने जो पेड़ लगाए थे, उनका फल और ठंडी छाया हम आज भी भोग रहे हैं।

तो क्या हमारा यह फर्ज नहीं बनता कि हम भी आने वाली नस्लों के लिए कुछ हरियाली बोकर जाएं? शहरों में अगर जगह की कमी है, तो बालकनी में पौधे लगाएं, गमलों में हरियाली सजाएं, लेकिन कुदरत से नाता न तोड़ें। गांवों में जो बचे-कुचे वन हैं, उनकी रक्षा करना हमारा नैतिक धर्म होना चाहिए। याद रखिये, जब अंतिम पेड़ काट दिया जाएगा और अंतिम नदी जहरीली हो जाएगी, तब हमें अहसास होगा कि हम 'नोट' खाकर जिंदा नहीं रह सकते।

यह पैसा, यह बड़ी गाड़ियां और यह आलीशान बंगले किसी काम के नहीं रहेंगे अगर हमारे पास सांस लेने के लिए शुद्ध हवा ही नहीं होगी। प्रकृति हमें चेतावनी दे रही है, बस हमें उसे सुनने की जरूरत है। आज विश्व वानिकी दिवस पर, आइए हम अपनी जड़ों की ओर लौटने का प्रयास करें। केवल एक दिन पेड़ बचाने की रस्म अदायगी न करें, बल्कि अपनी जीवनशैली में वनों को फिर से वही सम्मान दें। हर जन्मदिन, हर सालगिरह या किसी भी खुशी के मौके पर एक 'यादगार वृक्ष' जरूर लगाएं। कुदरत ने हमेशा हमें दिया ही है, अब समय है कि हम उसे कुछ लौटाना शुरू करें।

वनों की रक्षा करना केवल सरकार का काम नहीं, बल्कि हम सबका साझा फर्ज है। यह धरती हमारी मां है, और मां का आंचल हरा-भरा रखना हर संतान की जिम्मेदारी है। याद रखिए, अगर वन हैं, तो ही हमारा कल

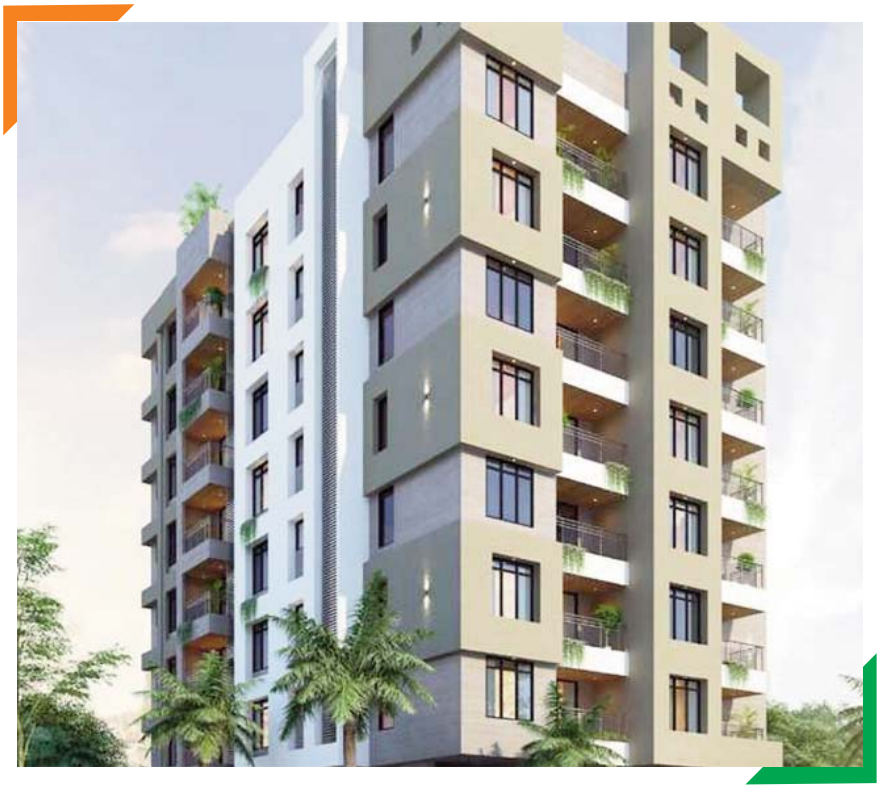

सुरक्षित है। वनों को बचाना असल में खुद के अस्तित्व को बचाना है। अब भी वक्त है, थोड़ा रुकिए, सोचिए और जाग जाइए। वरना इतिहास हमें उस स्वार्थी पीढ़ी के रूप में याद रखेगा जिसने अपनी ही संतान की सांसों का सौदा कर लिया था। आइए, आज इस धरती को फिर से हरा-भरा बनाने का एक सच्चा वादा करें। क्योंकि जब तक इस धरती पर हरा रंग है, तब तक ही हमारे जीवन में खुशहाली का रंग बना रहेगा।

मर्यादा, सुशासन और शांति के विश्वनायक श्रीराम

@ ललित गर्ग

श्रीराम का जीवन हमें सबसे पहले मयार्दा का संदेश देता है। आधुनिक विश्व की सबसे बड़ी समस्या मयार्दा का संकट है-राजनीति में मयार्दा नहीं, समाज में मयार्दा नहीं, परिवार में मयार्दा नहीं और अंतरराष्ट्रीय संबंधों में भी मयार्दा नहीं। श्रीराम का जीवन बताता है कि शक्ति से अधिक महत्वपूर्ण मयार्दा होती है। उन्होंने सामर्थ्य होते हुए भी राज्य के लिये संघर्ष नहीं किया, बल्कि पिता की आज्ञा और समाज की मयार्दा को सर्वोच्च माना। आज यदि विश्व राजनीति में मयार्दा और नैतिकता का समावेश हो जाये, तो अनेक युद्ध स्वतः समाप्त हो सकते हैं। राष्ट्र यदि केवल शक्ति और विस्तारवाद की नीति छोड़कर मयार्दा और न्याय की नीति अपनाएं, तो विश्व शांति संभव हो सकती है। आज दुनिया के अनेक युद्ध चाहे वह रूस-यूक्रेन युद्ध हो, मध्य-पूर्व के संघर्ष हों या अन्य क्षेत्रीय युद्ध-इन सबके मूल में अहंकार, विस्तारवाद, संसाधनों पर अधिकार और वैचारिक वर्चस्व की लड़ाई है। श्रीराम का युद्ध दर्शन इससे बिल्कुल भिन्न था। उन्होंने कभी युद्ध को लक्ष्य नहीं बनाया, बल्कि युद्ध उनके लिये अंतिम विकल्प था। उन्होंने पहले संवाद किया, फिर दूत भेजा, फिर समझौते का प्रयास किया और अंत में जब सभी रास्ते बंद हो गये तब युद्ध किया। यह युद्ध नीति आज के अंतरराष्ट्रीय संबंधों के लिये एक आदर्श मॉडल हो सकती है-पहले संवाद, फिर कूटनीति, फिर प्रतिबंध और अंत में युद्ध। आधुनिक विश्व यदि इस क्रम को स्वीकार कर ले, तो युद्धों की संख्या कम हो सकती है।

श्रीराम का जीवन सुशासन का भी आदर्श प्रस्तुत करता है, जिसे आज ह्रामराज्यह्व के रूप में जाना जाता है। रामराज्य का अर्थ केवल धार्मिक राज्य नहीं, बल्कि न्याय, समानता, सुरक्षा, समृद्धि और नैतिक शासन व्यवस्था है। रामराज्य में राजा और प्रजा के बीच दूरी नहीं थी, शासन उत्तरदायी था, न्याय त्वरित था, समाज में भय नहीं था और आर्थिक असमानता अत्यधिक नहीं थी। आज लोकतंत्र होने के बावजूद जनता और शासन के बीच दूरी बढ़ती जा रही है, राजनीति सेवा से अधिक सत्ता का माध्यम बनती जा रही है। श्रीराम का शासन हमें बताता है कि शासन का उद्देश्य सत्ता नहीं, सेवा होना चाहिए। आधुनिक लोकतंत्र यदि रामराज्य की अवधारणा से प्रेरणा ले, तो लोकतंत्र अधिक मानवीय और उत्तरदायी बन सकता है। श्रीराम का जीवन पारिवारिक मूल्यों का भी अद्भुत उदाहरण है। आज दुनिया में परिवार टूट रहे हैं, पीढ़ियों के बीच संवाद समाप्त हो रहा है, रिश्ते स्वार्थ पर आधारित होते जा रहे हैं। श्रीराम ने पुत्र के रूप में आदर्श प्रस्तुत किया, भाई के रूप में आदर्श प्रस्तुत किया, पति के रूप में आदर्श प्रस्तुत किया और मित्र के रूप में भी आदर्श प्रस्तुत किया। भरत और राम का संबंध त्याग और प्रेम का सर्वोच्च उदाहरण है। आज यदि परिवारों में अधिकार की जगह कर्तव्य और स्वार्थ की जगह त्याग की भावना आ जाये, तो समाज की आधी समस्याएं समाप्त हो सकती हैं।

श्रीराम ने मयार्दा के पालन के लिए राज्य, मित्र, माता-पिता, यहां तक कि पत्नी का भी साथ छोड़ा। इनका परिवार, आदर्श भारतीय परिवार का प्रतिनिधित्व करता है। श्रीराम रघुकुल में जन्मे थे, जिसकी परम्परा प्रान जाहुं बरु बचनु न जाई की थी। श्रीराम हमारी अनंत मयार्दाओं के प्रतीक पुरुष हैं इसलिए उन्हें मयार्दा पुरुषोत्तम के नाम से पुकारा जाता है। हमारी संस्कृति में ऐसा कोई दूसरा चरित्र नहीं है जो श्रीराम के समान मर्यादित, धीर-वीर, न्यायप्रिय और प्रशांत हो। वाल्मीकि के श्रीराम लौकिक जीवन की मयार्दाओं का निर्वाह करने वाले वीर पुरुष हैं। उन्होंने लंका के अत्याचारी राजा रावण का वध किया और लोक धर्म की पुनःस्थापना की। लेकिन वे नील गगन में दैदीप्यमान सूर्य के समान दाहक शक्ति से संपन्न, महासमुद्र की तरह गंभीर तथा पृथ्वी की तरह क्षमाशील भी हैं। वे दुराचारियों, यज्ञ विध्वंसक राक्षसों, अत्याचारियों का नाश कर लौकिक मयार्दाओं की स्थापना करके आदर्श समाज की संरचना के लिए ही जन्म लेते हैं। आज ऐसे ही स्वस्थ समाज निर्माण की जरूरत है। सामाजिक दृष्टि से भी श्रीराम का जीवन अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने समाज के सबसे निम्न माने जाने वाले लोगों को भी सम्मान दिया। केवट, शबरी, जटायु, सुग्रीव, हनुमान-ये सभी समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि थे। श्रीराम ने सभी को साथ लेकर संघर्ष किया और विजय प्राप्त की। यह सामाजिक समरसता का अद्भुत उदाहरण है। आधुनिक राष्ट्र निर्माण में भी यही सिद्धांत लागू होता है कि समाज के सभी वर्गों को साथ लेकर ही राष्ट्र शक्तिशाली बन सकता है। केवल आर्थिक विकास से राष्ट्र महान नहीं बनता, सामाजिक समरसता और नैतिक एकता से राष्ट्र महान बनता है।

श्रीराम हमारे कण-कण में समाये हैं, हमारी जीवनशैली का अभिन्न अंग हैं। श्रीराम का जीवन हमें यह भी सिखाता है कि एक आदर्श राष्ट्र केवल सेना और अर्थव्यवस्था से नहीं बनता, बल्कि चरित्र से बनता है। यदि नागरिक चरित्रवान होंगे, तो राष्ट्र स्वतः शक्तिशाली होगा। आज राष्ट्र शक्ति का अर्थ केवल सैन्य शक्ति और आर्थिक शक्ति माना जाता है, जबकि श्रीराम का जीवन बताता है कि नैतिक शक्ति सबसे बड़ी शक्ति होती है। रावण के पास अधिक सेना, अधिक धन, अधिक विद्या और अधिक शक्ति थी, फिर भी उसकी हार हुई क्योंकि उसके पास नैतिक शक्ति नहीं थी। यह आज के विश्व के लिये बहुत बड़ा संदेश है। आज जब दुनिया अस्तित्व के संकट, पर्यावरण संकट, युद्ध संकट और नैतिक संकट से जूझ रही है, तब श्रीराम का जीवन मानवता को संतुलन का संदेश देता है-शक्ति और शांति का संतुलन, अधिकार और कर्तव्य का संतुलन, भोग और त्याग का संतुलन, राज्य और समाज का संतुलन, परिवार और व्यक्तिगत जीवन का संतुलन। यही संतुलन ही मानव सभ्यता को बचा सकता है।

रामनवमी का पर्व हमें केवल पूजा करने का संदेश नहीं देता, बल्कि श्रीराम के जीवन को अपने जीवन, समाज और राष्ट्र की नीति में उतारने का संदेश देता है। यदि विश्व राजनीति श्रीराम की युद्ध नीति से प्रेरणा ले, यदि लोकतंत्र श्रीराम के सुशासन से प्रेरणा ले, यदि परिवार श्रीराम के पारिवारिक मूल्यों से प्रेरणा ले और यदि समाज श्रीराम की समरसता की भावना से प्रेरणा ले, तो एक आदर्श समाज और आदर्श राष्ट्र की कल्पना साकार हो सकती है। आज आवश्यकता इस बात की नहीं है कि हम केवल मंदिर बनाएं, बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने भीतर राम का निर्माण करें। जब व्यक्ति के भीतर राम का जन्म होगा, तभी समाज में रामराज्य आएगा। राम केवल इतिहास नहीं हैं, राम केवल आस्था नहीं हैं, राम मानव सभ्यता के नैतिक भविष्य का नाम हैं। यही रामनवमी का वास्तविक संदेश है।

वाराणसी पहुंचीं माधुरी दीक्षित

माधुरी दीक्षित ने बीते गुरुवार वाराणसी पहुंची थीं। आज शुक्रवार को अपने इंस्टाग्राम अकाउंट से एक वीडियो शेयर किया है। इसमें देखा जा सकता है कि एक्ट्रेस अपने पति श्रीराम नेने के साथ धार्मिक नगरी में हैं। काशी में उनका भव्य स्वागत हुआ। इसके बाद उन्होंने प्रसिद्ध काशी विश्वनाथ मंदिर के दर्शन किए। ब्लू कलर की साड़ी में माधुरी दीक्षित खूबसूरत लग रही हैं। उन्होंने कैप्शन लिखा है, 'जब मां गंगा जगमगाती हैं, तो बाकी सब फीका पड़ जाता है। हर हर महादेव'।

बॉलीवुड अभिनेत्री माधुरी दीक्षित ने आज रामनवमी पर वाराणसी में बाबा विश्वनाथ के दर्शन किए। अपने पति श्रीराम नेने के साथ वे बाबा के दरबार पहुंचीं। इसके बाद उन्होंने क्रूज पर सवार होकर मां गंगा के दर्शन किए और फिर गंगा आरती का खूबसूरत दृश्य देखा। गंगा मां के दर्शन कर माधुरी मंत्रमुग्ध हो गईं। उन्होंने अपनी यात्रा की झलकियां फैंस के साथ साझा की हैं। माधुरी दीक्षित ने आज शुक्रवार की सुबह पति श्रीराम नेने के साथ बाबा विश्वनाथ के दर्शन किए।

उन्होंने कॉरिडोर में भ्रमण कर आलौकिक छटा को निहारा। इस दौरान काशी विश्वनाथ धाम में दर्शन के लिए पहुंचे श्रद्धालु अभिनेत्री को अपने बीच देखा तो अचंभित रह गए। इसके बाद माधुरी दीक्षित ने शाश्वमेध घाट पहुंची। हालांकि उन्होंने क्रूज से ही गंगा आरती देखी। भीड़ अधिक होने के चलते वे घाट पर नहीं पहुंच पाईं।

15 साल की जाह्नवी के साथ हुई थी दिल दहला देने वाली घटना

बॉलीवुड एक्ट्रेस जाह्नवी कपूर आए दिनों अपने लुक्स और अपने रिलेशनशिप को लेकर चचाओं में बनी रहती हैं। जाह्नवी कपूर जब भी किसी शो में या इवेंट में जाती हैं वह अपने अनुभव जरूर साझा करती हैं। वहीं हाल ही में जाह्नवी कपूर ने अपने टीन ऐज के दिनों को याद कर एक अनुभव साझा किया है। उनका यह अनुभव बहुत अच्छा नहीं था बल्कि उनका यह अनुभव आज भी उनकी रूह कंपा देता है। जाह्नवी कपूर ने हाल ही में राज शमानी को इंटरव्यू दिया। जिसमें उन्होंने बताया कि जब वह 15 साल की थीं तब उनके साथ एक ऐसी घटना हुई थी जिसे वह आज तक नहीं भूल पाई हैं। एक्ट्रेस ने बताया कि 15 साल की उम्र में उन्होंने खुद का डीपफेक देखा था। उन्होंने कहा कि मुझे ये नहीं पता कि वो डीपफेक था या नहीं, लेकिन लगभग वह वैसा ही था। दरअसल मैंने पोर्न साइट पर अपनी तस्वीर देखी थी।

जीजा राघव चड्ढा के सपोर्ट में आईं प्रियंका

ग्लोबल स्टार प्रियंका चोपड़ा सोशल मीडिया पर खासा एक्टिव रहती हैं। आए दिनों प्रियंका चोपड़ा के वीडियो और पोस्ट सोशल मीडिया पर छा जाते हैं। बता दें कि प्रियंका अपनी बड़ी बहन होने का भी फर्ज बखूबी निभाती हैं। अकसर वह अपनी बहनों को सपोर्ट करती दिखती हैं, लेकिन इस बार प्रियंका परिणीति चोपड़ा के पति राघव चड्ढा के सपोर्ट में उतरी हैं। दरअसल एक पोस्ट सोशल मीडिया पर वायरल हो रहा है आपकी जानकारी के लिए बता दें कि राघव चड्ढा को आप पार्टी ने राज्यसभा में उपनेता के पद से हटा दिया है और उन्हें अन्य नेता अशोक मित्तल से रिप्लेस कर दिया है।

इन्हीं सबके चलते राघव चड्ढा ने एक पोस्ट शेयर किया जिसमें उन्होंने कहा कि वह खामोश हैं, लेकिन पराजित नहीं। राघव चड्ढा ने मोंटाज शेयर किया। उन्होंने संसद में उठाए गए मुद्दों को हाईलाइट किया। उन्होंने शिक्षा, बेरोजगारी, चिकित्सा, उपचार, वेतन इंडेक्सेशन और भगत सिंह को भारत रत्न दिलाने की मांग पर जोर डाला। इसी के साथ ही उन्होंने कैप्शन में भारत के झंडा शेयर किया।

Haldiram's
Banao
CHATPATE
PAL AUR
MEETHI
YAADEIN!
Pictures & presentation may not represent the actual product/portion.
Shop Online@www.haldiramsonline.com

RNI No. BIHHIN/2023/85653

आर ई सी
REC
असीमित ऊर्जा, अनन्त संभावनाएं
Endless energy. Infinite possibilities.
A MAHARATNA COMPANY

PARTNERING THE JOURNEY TO

VIKSIT BHARAT

WITH

INNOVATIVE FINANCING

FINANCIAL HIGHLIGHTS FOR **9M FY26**

Profit after Tax
₹ 12,920 CRORE

Disbursement
₹ 1,65,458 CRORE

Sanctions
₹ 3,33,354 CRORE

Follow us on: @RECLindia

E-mail: contactus@recl.in | Website: www.recindia.nic.in